- चौथा अध्याय -

शिल्प की दृष्टि से 'पोस्टर' नाटक की विशेषताएँ

चौथा अध्याय

शिल्प की दृष्टि से 'पोस्टर' नाटक की विशेषताएँ

पृष्ठभूमि :

'पोस्टर' कीर्तन तथा लोकनाट्य शैली में लिखा एक प्रायोगिक नाटक है। विषयवस्तु की दृष्टि से वह सामाजिक यथार्थवादी नाटक है, किंतु उसकी शैली लोकनाटक की रही है। सन १९५३ में दिल्ली में संगीत नाटक पर एक चर्चासत्र का आयोजन किया गया था, जिसमें पाश्चात्य नाट्यकलाओं की अपेक्षा भारतीय लोककला एवं लोकसंगीत का नाटकों में सार्थक प्रयोग करने पर विशेष चर्चा हुई। इसी चर्चासत्र के परिणामस्वरूप भारतीय नाटककार लोकनाट्य शैली में नाट्यनिर्मिति करने की ओर प्रवृत्त हुए।[१] भारतीय लोककला, लोकसंगीत का नाटक में अच्छा प्रयोग कर प्रायोगिक दृष्टि से नये तंत्र उभरने लगे। इसी दौर में कुछ नाटक भी लिखे गये। सबसे प्रथम मराठी में विजय तेंडुलकर का 'घाशीराम कोतवाल' यह नाटक सामने आया। इसमें नौटंकी, कीर्तन, भजन, दशावतारी आदि विभिन्न लोककलाओं का प्रयोग किया गया है। उसी समय बादल सरकार का 'पगला घोडा', 'अबु हसन' गिरीश कर्नाड का 'हयवदन' आदि नाटक सामने आये। प्रयोगधर्मी डा. शेष इस नवप्रवाह से अछूते कैसे रहते ? इसी समय दिल्ली दूरदर्शन पर उन्होंने 'कामगार विश्व' कार्यक्रम के अंतर्गत कीर्तनकार का प्रयोग देखा जिसे श्री. जयदेव हट्टंगडीने ही निर्देशित किया था। संगीत दिया था शांकनील ने। डा. शेष कीर्तनकार के उस प्रयोग से बेहद प्रभावित हुए। 'पोस्टर' की कथावस्तु पहले से ही उनके मस्तिष्क में थी। बाद में पूरा नाटक उन्होंने कीर्तन शैली में ढाल दिया।[२] वैसे ही डा. शेष बचपन से ही बिलासपुर में अपने घर कीर्तन देखते आये थे।[३] वह भी प्रभाव उनके मन पर रहा था। इसप्रकार इन विभिन्न सम्मिलित

प्रभावों ने "पोस्टर" की लोकनाट्य शैली निर्धारित की।

"पोस्टर" मुख्यतया महाराष्ट्र की कीर्तनशैली में लिखा नाटक है। कीर्तनशैली के साथ-साथ इसमें मास्क या मुखौटा पध्दति, समूह गान तथा समूहनृत्य शैली का भी प्रयोग किया गया है। आरंभ में गणेशवंदना के समय कीर्तनकार का साथी श्री गणेश का मुखौटा लगाकर मंच पर आता है। गणेशवंदना के बाद कीर्तनकार का निरूपण वर्तमान भ्रष्ट नेताओं पर आ जाता है। उस समय गणपति का मास्क लगानेवाला पात्र ही वर्तमान राजनेता की भूमिका में प्रस्तुत होता है। यहाँ लेखक ने व्यंग्यशैली का मार्मिक प्रयोग किया है। "गणपति का मास्क लगानेवाला पात्र अब चूडीदार, पाजामा, कूर्ते में है। सिर पर टोपी, मुख पर चौडी मुस्कान और गले में मोटी माला डाले हुए है। उसके चार हाथ हैं - एक में कुर्सी है, दूसरे में पिस्तौल है, तीसरे में थैली है, चौथे में एक टेलीफोन रिसीवर है।"[4] यहाँ लेखक ने राजकीय नेताओं की भ्रष्टाचारी, सत्ता-विषयक वृत्ति का पर्दाफाश प्रतिकात्मकता से किया है। आगे चलकर अखंडानंद स्वामी के प्रवचन में स्वर्ग-नरक के दृश्य में यमदूतों के लिए मास्क का प्रयोग मिलता है। डा. संपतराव जाधव इस संदर्भ में लिखते है, "इसमें भारतीय परंपरा दशावतारों की प्रस्तुति का प्रभाव भी माना जा सकता है। लेखकीय सूचनाओं में पाश्चात्य नाट्यशैली "माईम" तथा बॅले का प्रभाव स्वीकारा जा सकता है।"[5] भारतीय दशावतारी नाटक में राम, सीता, रावण, हनुमान आदि की भूमिका अदा करनेवाले कलाकार उन ऐतिहासिक पात्रों के मुखौटे धारण कर रंगमंच पर प्रस्तुत होते थे। इस भारतीय दशावतारी लोकनाटक का प्रभाव भी "पोस्टर" में मुखौटा रूपमें रहा होगा। नाटक में आगे चलकर मजदूरों के समूहगीत एवं समूहनृत्य में सामूहिक अभिनय की विशेषता विद्यमान रही है। सामूहिक अभिनय में माईम अर्थात् नृत (गीत विहीन गात्रविक्षेप) तथा बॅले अर्थात नृत्यनाट्य

(लयपूर्ण अंगसंचालन, जिसमें अभिनय एवं संगीत के तत्व मिले हो।) का समावेश भी दिखाई देता है। लेखक द्वारा दिए गए मंचनिर्देश जैसे - "वे माईम से काम कर रहे हैं",[६] तथा प्रसंगानुरूप सामूहिक गीत, नृत्य में इसके अंश मिल जाते है। इसप्रकार 'पोस्टर' में कीर्तनशैली, मास्क पध्दति, समूहनृत्य शैली, माईम, नाट्यशैली आदि का संमिश्र प्रयोग हुआ है।

४.१ कीर्तनशैली :

महाराष्ट्रीय कीर्तन पध्दति नवविधा भक्ति प्रकारों में से एक है। इसमें भजन, ईश्वर का नामसंकीर्तन, अभंगगायन, ब्रह्मनिरूपण तथा मूल अभंग के अर्थ की प्रस्तुति आदि का समावेश होता है। कीर्तन के मुख्य रूप से दो भाग होते है - १) पूर्व रंग २) उत्तर रंग। 'पूर्वरंग' में ईशस्तवन, भजन, मंगलाचरण, तथा निरूपणार्थ मूल अभंग का गायन होता है। साथ ही मूल अभंग का संक्षेप में अर्थ बताकर उसकी तत्वचर्चा आती है। 'उत्तररंग' में मूल अभंग के विवेचनार्थ किसी कथा का निरूपण किया जाता है। यह कथा धर्मग्रंथो, पुराणों या इतिहास ग्रंथ की भी हो सकती है। बीच-बीच में दृष्टांतस्वरूप विभिन्न धर्मग्रंथो के घटना प्रसंग भी उदाहरण के रूप में दिए जाते हैं, जिसमें पद, सुभाषित, श्लोक आदि का समावेश रहता है। प्रसंगानुरूप अभंग या पद गायन कथानिरूपण में तथा श्रोताओं को रसासिक्त करने में सहायक रहते हैं। कथा के अंत में मूल अभंग को भैरवी राग में गाकर कीर्तन समाप्त होता है।

कीर्तनकार कीर्तन करते हुए स्वयं प्रवचन एवं कथानिरूपण करता है। वह ब्रह्मज्ञान का अध्येता एवं व्याख्याता होता है। शास्त्रीय संगीत में भी उसकी योग्यता रहती है। उसे कीर्तन में साथ देने के लिए वाद्यवृंद भी मंच पर उपस्थित रहता है, जिसमें तबला, हार्मोनियम, मृदंग

मंजिरे आदि का समावेश रहता है। इसप्रकार कीर्तनकार का कीर्तन "वन मैन थियेटर" का प्रभावी प्रयोग रहता है। डा. शेष ने भूमिका में लिखा भी है, "इसलिए अकेला कीर्तनकार जब अपनी कलात्मक उंचाइयों को छूता है तो दर्शकों को पूरी तरह से बांधे रखता है। संगीत नाट्य का एक विलक्षण समवेत आस्वाद कराता है।"[७] इसप्रकार कीर्तनशैली ब्रह्मनिरूपण एवं कथा निरूपण के साथ संगीत के सुरीले आस्वाद की भी क्षमता रखती है।

महाराष्ट्रीयन कीर्तन पध्दति के मुख्यतया दो रूप हैं - १) हरिदासी कीर्तन पध्दति और २) रामदासी कीर्तन पध्दति। हरिदासी कीर्तन पध्दति में महाराष्ट्र के वारकरी संप्रदाय के आराध्य श्री विठ्ठलजी का नामघोष कर ईशवंदना से कीर्तन शुरू होता है। तो रामदासी कीर्तन पध्दति में 'जय-जय रघुवीर समर्थ' का प्रयोग किया जाता है। दोनों ही पध्दतियों में कीर्तनकार की पोषाक भिन्न रहती है। हरिदासी कीर्तन पध्दति में कुर्ता, पाजामा, अथवा धोती कंधेपर उत्तरीय और सिर पर पगडी या 'साफा' परिधान किया जाता है, तो रामदासी कीर्तनकार केवल घुटनों तक लम्बा अंगरखा या कुर्ता पहनते है। कंधेपर रामनाम का उत्तरीय भी रहता है। 'पोस्टर' महाराष्ट्र की हरिदासी कीर्तनशैली में प्रस्तुत होता है। कीर्तनकार की पोशाक, वादयवृंद आदि सभी उसी के अनुरूप रहा है।

४.२ <u>मास्क/मुखौटे का प्रयोग</u> :

मास्क या मुखौटे का प्रयोग भारतीय दशावतारी नाटक का ही एक रूप है। दशावतारी लोकनाटक में राम, रावण, सीता, हनुमान आदि की भूमिकाएं तत्कालीन ऐतिहासिक मुखौटो का प्रयोग कर प्रस्तुत की जाती थी। डा. संपतराव जाधवजी के मतानुसार, "मास्क या

मुखौटा पध्दति पाश्चात्य ग्रीक और रोमन नाटक का एक रूप है, जिसमें विविध प्रकार के मुखौटे धारण कर कोई कथा मंचित की जाती थी। आजकल पशु-पक्षियों के मुखौटे धारण करके भी कोई कथा प्रस्तुत की जाती है। अत: इसे पाश्चात्य और भारतीय पध्दति का मिश्रण भी माना जा सकता है।"[८] अर्थात् यह मुखौटा पध्दति भारतीय और पाश्चात्य नाट्य पध्दति का मिश्रण रही है। डा. शेष ने इस मुखौटा पध्दति का सर्व प्रथम प्रयोग 'अरे मायावी सरोवर' में किया था, जो काफी प्रशंसनीय रहा। इस नाटक में उल्लू, कुत्ता, गाय, घोडा आदि को मुखौटों के द्वारा नौटंकी शैली में प्रस्तुत किया गया है। 'पोस्टर' में थोडी मात्रा में दो-तीन दृश्यों में यह मुखौटा पध्दति प्रयुक्त होती है।

५.३ समूह नृत्य शैली :

आदिवासी लोकगीत एवं लोकनृत्य में समूह नृत्य शैली का प्रयोग हुआ है, जिसमें सामूहिक अभिनय की विशेषता विद्यमान रही है। अत: इसमें पाश्चात्य नाट्यशैली बॅले अर्थात् नृत्यनाट्य और लेखकीय निर्देश के अनुसार माईम अर्थात् नृत्त का समावेश दिखाई देता है। नृत्त और नृत्य नाटय दो अलग-अलग शैलियाँ है। दोनों का अंतर स्पष्ट करते हुए डा. दुर्गा दीक्षित कहती है, "नृत्य शब्द नृत् से बना है। नृत का अर्थ है लयपूर्ण अंगसंचालन, लयतालयुक्त गात्रविक्षेप। नेत्रों, भुजाओं और अन्य अंगो के भावविहीन संचालन एवं प्रदर्शन तक ही नृत्त सीमित है। नृत्य में भाव और संगीत के तत्व सम्मिलित हैं। संगीत की पृष्टभूमि पर अभिनयात्मक अंगसंचालन में नृत्य उत्पादित होता है। दृश्यात्मकता, लयतालबध्दता अभिनयशीलता और मंचीय आयामों की विशेषताओं के कारण नाटक में नृत्य को स्वीकार किया जाता है।"[९] 'पोस्टर' के समूहनृत्य एवं समूह गान में इसी नृत्त एवं नृत्यनाट्य की विशेषताएँ दिखाई देती हैं।

इसीप्रकार 'पोस्टर' में कीर्तनशैली, मास्क अर्थात दशावतारी समूह नृत्य अर्थात बॅले आदि नाट्यशैलियों का संमिश्रण दिखाई देता है,

जिससे 'पोस्टर' की लोकनाट्य शैली की पहचान स्पष्ट होती है।

४.४ 'पोस्टर' का शिल्पविधान :

शिल्प की दृष्टि से "पोस्टर" नाटक की विशेषताएँ देखने से पहले इस बात की सूचना देना अत्यंत आवश्यक है कि प्रस्तुत पुस्तक में 'पोस्टर' के एक साथ दो प्रारूप मिलते हैं - मूल प्रारूप और संशोधित प्रारूप। रंगमंचीय सुविधाओं की दृष्टि से मूल प्रारूप में कुछ परिवर्तन कर, संशोधित प्रारूप प्रस्तुत किया गया है। अत: यहाँ हमने अध्ययनार्थ संशोधित प्रारूप को ही लिया है। उसी के आधार पर प्रस्तुत नाट्यकृति का मूल्यांकन किया है।

शिल्प, शैली एवं प्रस्तुति की दृष्टि से 'पोस्टर' एक नवीन प्रयोग है। 'पोस्टर' की नवीनता एवं विशेषता देखने के लिए नाटक के शिल्पगत तत्त्वों के आधार पर उनका मूल्यांकन करना अधिक औचित्यपूर्ण होगा। नाटक की शिल्पविधी के छ: तत्त्व माने गए हैं - १) कथावस्तु २) पात्र और चरित्रचित्रण ३) कथोपकथन या संवाद ४) देश काल तथा वातावरण ५) उद्देश्य ६) भाषाशैली। इसके साथ ही नाटक एक दृश्यकाव्य होने से वह रंगमंच एंव अभिनय से जुडी हुअी विधा है। रंगमंच के बिना नाटक की प्रस्तुति संभव ही नहीं है। अत: रंगमंच एवं अभिनय को भी नाटक के शिल्पविधान के अंतर्गत समाविष्ठ किया जा सकता है। इसके साथ ही 'पोस्टर' की गीतयोजना भी नाटक की प्रस्तुति की दृष्टि से एक अनोखा प्रयोग रही है। इससे नाटक सरस बन गया है। अत: उसका भी विवेचन, यहाँ स्वतंत्र रूप से किया गया है।

४.४.१ कथावस्तु :

कथावस्तु नाटक का सर्वप्रथम एवं आधारभूत तत्व है। नाटकीय कथा जलप्रवाह की तरह गतिशील एवं स्वाभाविक होनी चाहिए। प्राचीन भारतीय नाट्यप्रणाली के अनुसार, नाटक की कथावस्तु ऐतिहासिक अथवा काल्पनिक होती है। वह अधिकारिक तथा प्रासंगिक इन दो रूपों में विभाजित होती है। अधिकारिक कथा में नाटक के प्रमुख कार्य एवं फल की प्रतिष्ठा रहती है। प्रासंगिक कथा, मुख्य कथा के विकास में सहायक रहती है। ये कथानक इष्ट देवता की स्तुति से शुरू होकर भरतवाक्य से समाप्त होते हैं।

आधुनिक हिंदी नाटक पाश्चात्य नाट्यप्रणाली के अनुसार वर्तमान मनुष्य जीवन की यथार्थता एवं गतिशीलता को चित्रित करते हैं। इन नाटकों की कथावस्तु वर्तमान समय तथा समसामयिक युगबोध को लेकर चलती है। वस्तुत: आज के नाटकों में कथा का स्थान गौण हो रहा है। कथा की प्रमुखता की अपेक्षा पात्रों की विभिन्न चारित्रिक विशेषताओं एवं विभिन्न स्वभाव अंकन के माध्यम से नयी जीवनदृष्टि देने के प्रयास हो रहे हैं। कथा के सुखांत एवं दु:खांत की अपेक्षा उसकी यथार्थानुकूलता की ओर अधिक ध्यान दिया जा रहा है।

१९७७ में लिखा 'पोस्टर' लोकधर्मी-नाटयधर्मी परंपरा का निर्वाह करनेवाला प्रयोगक्षम अनोखा नाटक है। लोकनाट्य शैली में प्रस्तुत होनेवाले इस नाटक की कथावस्तु आदिवासी जीवन की त्रासदी को लेकर चलती है। कीर्तन शैली में प्रस्तुत रचना होने से, इसकी कथावस्तु दो भागों में बँट चुकी है - पूर्वरंग और उत्तर रंग। पूर्व रंग में सद्गुरु नमन तथा गणेशवंदना कर कीर्तनकार मुख्य श्लोक का गायन करते हुए महाभारत के युध्द का प्रसंग उद्घटित करते है। शत्रुरूप में खडे अपने ही लोगों को मारने

न मारने की विवशता में अर्जुन बेचैन है। सारथी श्रीकृष्णजी अर्जुन के मन में क्षात्रधर्म एवं स्वधर्म की चेतना जगाते हुए उसकी कर्तव्यबुध्दि एवं विवेक-बुध्दि को आवाहन कर रहे है। कीर्तनकार के ब्रह्मनिरूपण में श्रोताओं में से एक युवक रूकावट पैदा करने की कोशिश करता है। मंदिर के पिछवाडे में, पिछले साल हुअी बलात्कार की घटना का वह उल्लेख करता है। वह बताता है, कि एक सत्ताधारी व्यक्ति द्वारा एक गरीब लकडी पर बलात्कार हुआ था। उस लडकी ने तथा युवक ने भी बलात्कारी को रोकना चाहा, किंतु दोनों ही उसके सामने कमजोर रहे। उस सत्ताधारी व्यक्ति ने युवा को जान से मार डालने की, उसकी जाति को नष्ट करने की, झोपडों में आग लगवाने की धमकी थी। युवा ने यह घटना पुलिस, अखबारवाला तथा लडकी के बाप को भी बता दी, किंतु सभी खामोश रहे। सभी सत्ताधारी व्यक्ति की ताकद से डरते थे। बेचारी लडकी बाद में घुट-घुट कर मर गयी। इसी घटना से युवा उद्विग्न बन गया है और बार-बार कीर्तन रोकने की कोशिश करता है। युवा यह भी सूचित करता है कि बलात्कारी और लड़की का बाप दोनों भी इस कीर्तन में उपस्थित हैं। कीर्तनकार द्वारा आवाहन करने पर भी दोनों में से कोई भी सत्य के उद्घाटन का साहस नहीं करता। अत: कीर्तनकार अन्याय-अत्याचार के उद्घाटन के लिए, लोगों की मानसिकता तैयार करने के लिए, उसीके सदृश एक आदिवासी कथा प्रस्तुत करता है।

आदिवासी कथा नाटक में कीर्तनकार के ब्रह्मनिरूपण के पश्चात आनेवाली उत्तररंग की कथा के रूप में प्रस्तुत होती है। दोनों ही कथाओं का मूल कथ्य सत्ताधारी वर्ग द्वारा श्रमिक वर्ग का हो रहा निरीह शोषण है। सत्ताधारी व्यक्ति द्वारा गरीब लडकी पर हुए अत्याचार की घटना, पटेल द्वारा चैती पर हो रहे अत्याचार की घटना से साम्य रखती है। सत्य उद्घाटन का प्रयास करनेवाला युवा और पटेल की शोषणनीति का विरोध करनेवाला आदिवासी मजदूर कल्लु दोनों

के ही व्यक्तित्व में संघर्षचेतना की स्वाभाविकता दिखाई देती है। इसप्रकार 'पोस्टर' की कथा दोहरे आयाम लेकर चलती है। कीर्तनकार के कीर्तन में बैठे श्रोता ही बाद में आदिवासी कथा के पात्र बन जाते हैं। कथावस्तु पूर्वदीप्ति शैली से प्रस्तुत होती है। दोनों ही कथाओं में पात्रों का मूल अस्तित्व बना रहता है। इसप्रकार कथावस्तु का गठन वैसे जटिल है. किंतु उसे स्वाभाविकता से एक दूसरे में पिरोकर डा. शेष ने नाट्यप्रतिभा की कुशलता का परिचय दिया है। अत: कथा वस्तु कृत्रिमता तथा ढीलेपन के दोष से बच गयी है।

आधुनिक सभ्यता से बहुत दूर, जंगली परिवेश में बसा हुआ सौ-दो-सौ की बस्ती का एक छोटा सा गाँव है। वहाँ जमींदारी की प्रथा है। गाँव का जनजीवन पिछडा हुआ है। छोटेलाल पटेल इस गाँव का सर्वेसर्वा तथा शोषक जमींदार है। सभी उसकी सत्ता से, ताकद से डरते है। पैसा एवं ताकद के बल पर उसने अपने इलाके की पूरी पुलिसयंत्रणा एवं प्रशासकव्यवस्था को पंगु बना दिया है। गाँव के सभी आदिवासी मजदूर उसकी तानाशाही में अपना जीवनयापन करते हैं। अपनी पूर्व परंपरा के अनुसार पटेल ने आदिवासी शोषणतंत्र, आज भी कायम रखा है। केवल एक रुपिया मजदूरी में आदिवासी मजदूर पटेल की खेती-कारखाने में दिनभर कडी मेहनत करते हैं। हर्रा, बहेडा, चिरौंजी, गोंद आदि इकठ्ठा कर उनकी छटाँई तथा सफाई का काम चलता रहता है। पटेल वह तैयार माल शहर भिजवाकर लाखों का मुनाफा अकेले ही हडप लेता है। इसीप्रकार पटेल करोडों की जायदाद का अकेला मालिक बन जाता है। विलासिता के, सुविधा के सभी आधुनिक साधन उसके पास मौजुद हैं। इधर श्रमिक मजदूर वर्ग दो वक्त की रोटी के लिए भी मोहताज रहता है। लज्जा रक्षण के लिए आवश्यक वस्त्र तक बडी मुश्किल से जुट पाते हैं। प्रसंगानुरूप पटेल धर्म को हथियार बनाकर मजदूरों की विचारशक्ति पर परदा डालने की कोशिश करता है, ताकि मजदूर अपनी वास्तव स्थिति के बारे में हमेशा अनजान रहे। वह तथाकथित स्वामी अखंडानंद के द्वारा स्वर्ग-नरक

की तस्वीरें दिखाकर मजदूरों में पाप-पुण्य की अंधश्रद्धाएं फैलाता है। पाप का भय एवं पुण्य का लालच दिखाकर उन्हें अंधविश्वास में रखने की कोशिश करता है। अत: उसकी सत्ता टस से मस नहीं होती।

पटेल के शोषण का विरोध करने का साहस कोई नहीं करता है। सबसे प्रथम चैती इस शोषण के खिलाफ अपने पति को तैयार करने की कोशिश करती है। वह अपने मायके के मजदूर नेता 'राघोबा' के कारनामों से परिचित है। वह जानती है कि कैसे संघ-शक्ति से बडे-बडे जमींदार भी डरते हैं। कुतुहालवश वह एक पोस्टर नुमा रंगीन कागज मायके से उठा लाती है। हँसी-हँसी में लगाया गया वह पोस्टर पटेल के क्रोध का कारण बन जाता है, क्योंकि उस पर मजदूर वर्ग के नेता राघोबा की तस्वीर छपी हुई है। और शोषक वर्ग को डरावनी चेतावनी भी दी हुई है। यही पोस्टर बाद में मजदूरों की संघशक्ति का, पटेल की शोषणानीति के विरोध का, मजदूरों की संघर्ष चेतना का प्रतीक बन जाता है। इसीके प्रभाव स्वरूप मजदूर अपने स्वायत्त अधिकारों के प्रति जागृत होते हैं और पटेल की शोषणनिति का विरोध करते हैं। इसीसे उनकी मजदूरी एक रूपिये से डेढ रूपिये तक बढ जाती है। पटेल इस संघर्ष की जड को ही उखाडना चाहता है। अत: वह संघर्षनायक कल्लु को मूकादम बनवाकर उसकी पत्नी चैती की ड्यूटी हवेली पर लगवाता है। यह उस गाँव की पुरानी रीत है। जिसकी भी ड्यूटी हवेली पर लग गयी, मानो उसे थोडीसी सुविधा एवं चार गहनों के लालच में रखैल बनाया गया। पटेल तथा आनेवाले वन अधिकारीयों ने भोग के लिए, उनके तन को खरीदा गया। चैती एवं कल्लु जब इस बढौती का अर्थ समझ जाते हैं, तो वे इस बढौती को ठुकराते हैं। गुरूजी द्वारा एक पोस्टर के चार पोस्टर बनवाते हैं। उस पर "चैती हवेली नहीं जायेगी", "गाँव की कोई भी स्त्री हवेली नहीं जायेगीं", लिखकर उसे गोदाम में चिपकाते हैं। इसवक्त कोई

भी मजदूर (मजदूर-३ के सिवाय) उनका साथ नहीं देता। पति-पत्नी अकेले ही अपना संघर्ष जारी रखते हैं। पोस्टर पढकर पटेल को मजदूरों के संघर्ष नायक का पता चलता है। वह गुस्से से तर होकर कल्लु को कोडें से मार गिराता है। चैती उसे सहन नहीं कर पाती। वह पटेल के मूँह पर थूक कर उसको जवाब देती है। पटेल आपे से बाहर होकर चैती का हाथ पकडता है। मजदूर-तीन इसे सहन नहीं कर पाता और लपककर पटेल की गर्दन पकड लेता है। कल्लु झाट से गिरा कोडा उठाकर पटेक को मारता है। सभी मजदूर कल्लु का साथ देते हैं। पटेल मजदूरों के सामने गिडगिडाकर कल्लु से अपने प्राणों की भीख माँगता है। यहाँ संघर्षसूत्र स्वाभाविकता से आगे बढकर चरमसीमा पर पहुँच जाता है। सुखलाल की चापलूसी से पुलिस आकर कल्लु तथा अन्य मजदूरों को गिरफ्तार कर ले जाती है। उन्हें जेल होती है। अंत में चैती हवेली पहुँचा दी जाती है। यहीं पर आदिवासी कथा की समाप्ती होती है। यहाँ कथावस्तु का अंत निश्चय ही दर्शकों को अस्वस्थ बनाता है। यहाँ डा.शेष ने यथार्थता को सूचित किया है। यहाँ लेखक किसी आदर्शवादिता की ओर नहीं ले जाते बल्कि वे वास्तवता को प्रतिपादित करते है। अत: यथार्थ धरातल पर कथावस्तु का अंत पाठक या दर्शक को सजग बनाकर उन्हें आदिवासी जन-जीवन के प्रति सोचने के लिए प्रेरित करता है।

अंत में युवा, कीर्तनकार से विभिन्न प्रश्न पूछता है, जिसे कीर्तनकार यथार्थ धरातल पर सुलझाने की कोशिश करता है। इसी कथा के परिणामस्वरूप युवा एवं लडकी का बाप साहस बाँधकर बलात्कारी का नाम बताने के लिए मानसिक रूप से तैयार होते हैं। यहाँ कीर्तनकार कथानिरूपण के द्वारा हारे हुए लोगों को निर्भय बनाने की अन्याय-अत्याचार का मुकाबला करने के लिए उनमें आत्मबल निर्माण करने की कोशिश करते है, और अंत में वे उसमें सफल भी होते है।

अंत में सभी श्रोता बलात्कारी को पकडने के लिए चले जाते हैं और कीर्तनकार आरती से कीर्तन की समाप्ति करते है।

इसप्रकार प्रस्तुत नाटक की कथावस्तु कीर्तनशैली में प्रस्तुत होकर नाटक के भीतर नाटक का प्रयोग दर्शाती है। कथावस्तु का आदि और अंत पूर्वदीप्ति शैली में उजागर होता है। आदिवासी प्रांत में चल रहे शोषण तंत्र का पर्दाफाश, उसकी वास्तव स्थिति यथार्थ धरातल पर डा. शेष ने यहाँ प्रस्तुत की है। कल्लु एवं चैती के संघर्षशील चरित्र तथा पोस्टर चिपकाने की घटना कथाविकास में नया मोड लाती है और वह स्वाभाविकता से संघर्ष के द्वारा चरमसीमा की ओर बढ जाती है। पूर्वरंग एवं उत्तररंग की कथाओं का संगठन जटिल होने पर भी उसका गठन सफल एवं स्वाभाविक रहा है। अत: कथावस्तु की दृष्टि से 'पोस्टर' एक सफल प्रयास माना जा सकता है।

४.४.२ पात्र तथा चरित्रचित्रण :

भारतीय नाट्यसिद्धांत के अनुसार नाटक का दूसरा तत्व है, नेता, जिसे पाश्चात्य विद्वानों ने चरित्रचित्रण कहा है। यह नाटक का सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है, क्योंकि नाटक के चरित्र जहाँ एक ओर अपने क्रियाकलाप से नाटकीय कथाविकास में सहायक होते हैं, वहाँ दूसरी ओर नाटकीय घटनाओं का प्रकाशन भी करते हैं, जिसमें उनकी चरित्रिक विशेषताएं भी उद्घटित होती हैं। इस दृष्टि से नाटक के चरित्र साधन भी हैं और साध्य भी। सशक्त पात्र तथा चरित्रयोजना नाटक में सजीवता निर्माण करते हैं। इस संदर्भ में विलियम आर्चर का कथन यहाँ विचारणीय है, कि "जीवंत नाटक एवं मृत नाटक का अंतर यही है कि प्रथम में चरित्र कथा का नियंत्रण करते हैं जबकि दूसरे में कथा चरित्रों का नियंत्रण करती है।"[१०]

नाटक की पात्रयोजना कथावस्तु के अनुकुल तथा विषय एवं नाटकीय घटनाओं से सम्बद्ध होनी चाहिए। अंतर्द्वन्द्व से युक्त चरित्र नाटकीय कथ्य को गतिशील बनाते हैं। वर्तमान युग में चरित्र चित्रण नाटक के प्राण बन रहे हैं। आज चरित्रचित्रण में आदर्श की अपेक्षा यथार्थवादी दृष्टि का विकास हो रहा है। नाटक की सफलता में पात्र तथा उनके चरित्र महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

'पोस्टर' की पात्रयोजना में नाटककार के अद्भुत कौशल के दर्शन होते है। 'पोस्टर' नाटक के भीतर नाटक का प्रयोग है। कीर्तन के पूर्वरंग में उपस्थित बलात्कार की घटना तथा उसीके समकक्ष उत्तररंग में प्रस्तुत आदिवासी कथा दोनों ही कथाओं के पात्र अलग-अलग रहे हैं, परंतु उन्हें अभिनीत करनेवाले कलाकार एक ही हैं। एक ही पात्र दोनों कथाओं में दोहरी भूमिका प्रस्तुत करते हैं। फिर भी दोनों की स्वाभाविकता बनी रही है। कहीं भी असंगति या ढीलापन दिखाई नहीं देता। इसी के साथ ही समूहनृत्य तथा समूह गान में सहभागी आदिवासी स्त्री-पुरुष नाटक के अलग पात्र हैं। इसप्रकार यह पात्रयोजना तीन स्तरों पर प्रस्तुत होती है।

१) प्रथम स्तर में कीर्तनकार उसका साथी, पागल युवक तथा कीर्तन सुनने के लिए बैठे हुए श्रोतागण आते हैं।

२) दूसरा स्तर आदिवासी कथा में उपस्थित पात्रों का है, जिसमें कल्लु चैती, पटेल, सुखलाल, फॉरेस्ट अफसर, गुरुजी तथा अन्य आदिवासी मजदूर स्त्री-पुरुष आते हैं।

३) तीसरा स्तर समूहनृत्य एवं समूह गान में सहभागी आदिवासी स्त्री-पुरुषों का है।

इसप्रकार यह त्रीस्तरीय पात्रयोजना होते हुए भी इनके संयोजन एवं गठन में सहज स्वाभाविकता दिखाई देती है। संपूर्ण नाटक में कीर्तनकार, युवा, कल्लु, चैती, पटेल आदि प्रमुख पात्र हैं, तो कीर्तनकार का साथी, श्रोता-१, श्रोता-२, श्रोता-३, श्रोता-४, श्रोता-५, फॉरेस्ट अफसर, गुरूजी, सुखलाल, मजदूर-१, मजदूर-२, मजदूर-३ मजदूर-४, मजदूर-५ मजदूर-६, औरत-१, औरत-२, औरत-३, स्वामी अखंडानंद, वृध्द, समूह-क) १,२,३ समूह ख) १,२,३ समूह-ग) १,२,३ आदि गौण पात्र के रूप में आते हैं। इसप्रकार 'पोस्टर' में कुल मिलाकर चौंतीस पात्र आते हैं। साथ ही प्रसंगानुरूप समूह गान एवं समूह नृत्य में सहभागी पात्र अलग हैं। नाटक में प्रसंगानुरूप भावप्रस्तुति में तथा कथा विकास में उनका महत्वपूर्ण सहयोग रहा है। अप्रत्यक्ष पात्रों में 'राघोबा' बंगाली नेता तथा मजदूरों के नेता के रूप में उभरता है।

'पोस्टर' के पात्र कथाविकास में सहायक तथा नाटकीय क्रियाव्यापार के अनुकूल बन पडे हैं। उनके चरित्रचित्राण भी सहज स्वाभाविक बन पडे हैं। यहाँ हम 'पोस्टर' के प्रधान पात्रों की चारित्रिक विशेषताएं देखेंगे।

४.४.२.१ कीर्तनकार :

कीर्तनकार नाटक का सूत्रधार है। वह प्रमुखत: तीन रूपों में नाटक में विद्यमान है - १) कीर्तनकार, २) निवेदक, ३) कथाकार इसके साथ ही वह आदिवासी कथा में विभिन्न भूमिकाओं को भी अभिनीत करता चलता है। जैसे-पटेल, गुरूजी, स्वामी अंखंडानंद आदि। एक ही पात्र इन अलग-अलग भूमिकाओं को निभाते हुए भी उसकी प्रस्तुति में स्वाभाविक क्रम रहा है।

नाटक का प्रारंभ ही कीर्तनकार द्वारा सद्गुरू नमन एवं ईशास्तुति से होता है। नाटक के आरंभ में कीर्तनकार एक उपदेशक, धर्ममत एवं संतवचनों का ज्ञाता तथा एक कुशल वक्ता के रूप में हमारे सामने आता है। कीर्तनकार के व्यक्तित्व के अनुरूप वह कथानिरूपण के साथ-साथ विभिन्न गानशैलियों का भी सफल प्रयोग करता है। उसका संपूर्ण व्यक्तित्व साधुत्व की गरिमा से मंडित है। एक सच्चा कीर्तनकार हमेशा सेवाभावी एवं समाजसुधार के प्रति लगनशील होता है। वह वेद शास्त्र का ज्ञाता, मिमांसक एवं अध्येता होता है। वह निर्भयता से सामाजिक-राजनीतिक व्यंग्यों पर प्रहार कर समाज का दिशानिर्देशन करता है। 'पोस्टर' का कीर्तनकार भी इन्हीं विशेषताओं से युक्त है। बलात्कार की घटना सुनकर वह लोगों को सच्चे धर्म का निरूपण कर, उन्हें निर्भय बनाने की सफल कोशिशा करता है। अत: वह केवल धर्म उपदेशक न होकर एक सच्चा साधु है। समाज प्रबोधक है। ईश्वर की शक्ति में अटूट विश्वास रखनेवाला सत्यवादी, निर्भय व्यक्तित्व है। अत: नाटक में कीर्तनकार का व्यक्तित्व आदि से अंत तक प्रभावशाली बन पडा है। जिसकी प्रस्तुति नाटककार का अभिनय कौशाल तथा प्रयोगधर्मी रूचि का परिचय करा देती है।

४.४.२.२ युवा :

कीर्तनकार के पश्चात नाटक में युवा का स्थान आता है। उसके चरित्रचित्रण में नाटककार ने सूक्ष्मता से काम लिया है। परिस्थिति सापेक्षाता में उसका व्यक्तित्व विकसित होता है।

युवा बलात्कार की घटना से तथा सत्ताधारी वर्ग के आतंक से भयभीत है। मंदिर के पिछवाडे में हुयी बलात्कार की भीषण घटना तथा उसके प्रति पुलिसवर्ग, अखबार एंव स्वयं लडकी के पिता की

उदासीनता युवा को उद्विग्न बनाती है। वह प्रयास करके भी उस लडकी की मदद नहीं कर सकता है, अत्याचारी का सबल विरोध नहीं कर सकता है, अत: वह बेचैन बन जाता है। बलात्कारी व्यक्ति उसे जान से मार डालने की, उसकी जाति को नष्ट करने की, उनके झोपडों में आग लगवाने की धमकी देता है। सत्ताधारी वर्ग की यह शोषणनीति एवं आतंक देखकर उसकी स्थिति पागल जैसी बन जाती है। अंत में आदिवासी कथा सुनने के बाद उसमें आत्मबल निर्माण होता है। उसके द्वारा सत्य का उद्घाटन, उसकी मानसिक तैयारी एवं उसकी निर्भयता का प्रमाण है। इसप्रकार धीर-धीरे उसका चरित्र विकसित होता है।

४.५.२.३ कल्लु :

कल्लु 'पोस्टर' की आदिवासी कथा का नायक है। वह संघर्षशील युवा मजदूर के रूप में नाटक में क्रियाशील है। निर्भयता, संघर्षशीलता, अधिकार प्राप्ति के लिए सत्ताधारी शोषक वर्ग से लोहा लेने की वृत्ति उसके व्यक्तित्व को उँचा उठा देती है। नाटकीय घटना एवं अनुकूल परिस्थिति में उसके व्यक्तित्व के एक-एक पहलु निखर उठते हैं।

कल्लु एक साधारण आदिवासी मजदूर है। शिक्षा-ज्ञान से वंचित है। आधुनिकता से बेखबर कल्लु, अन्य मजदूरों की तरह कष्टमय जीवन बिताता है। चैती द्वारा कुतूहलवश लाया गया पोस्टर एवं उसे देखकर पटेल की बदली हुअी मानसिकता कल्लु को अपने अधिकारों के प्रति सजग बनाती है। चार रूपिये रोजाना प्राप्ति के लिए वह डटकर पटेल जैसे जमींदर से लडने के लिए तैयार होता है, तथा अन्य मजदूरों को भी तैयार करता है। उसमें अद्भुत संघटन कौशल है। वह मजदूरों को इकठ्ठा कर उन्हे अधिकार प्राप्ति के लिए लडने की प्रेरणा देता है। उसीके प्रयत्न से उनकी मजदूरी एक रूपिये से डेढ रूपिये तक बढ जाती है।

कल्लु एक स्वाभिमानी मजदूर है। पटेल द्वारा मुकादम बनाने तथा चैती की ड्यूटी हवेली में लगाने का असली मतलब जब वह समझ जाता है, तो वह मुकादम पद को ठुकराता है। पटेल की घिनौनी हरकत का पोस्टर के माध्यम से विरोध करता है। वह हर हालत में पत्नी की सुरक्षा के प्रति सजग रहता है। अर्थप्राप्ती एवं सत्ता-सुविधा के मोह में वह अपनी इज्जत का सौदा पसंद नहीं करता। उसके चरित्र में स्वाभिमानी, ईमानदार मजदूर का व्यक्तित्व निखर उठा है।

इसप्रकार कल्लु का चरित्र, स्वाभाविकता से विकसित होता है। उसकी संघर्षशील वृत्ति नाटकीय कथाविकास में सहायक रही है। निर्भय, चतुर स्वाभिमानी संघर्षशील मजदूर नेता के रूप में उसका चरित्र अनूठा बन पडा है।

४.४.२.४ चैती :

चैती 'पोस्टर' के आदिवासी कथा की नायिका तथा कल्लु की पत्नी है। संपूर्ण नाटक में यद्यपि वह कम समय के लिए आती है, फिर भी उसका स्थान नाटक में महत्वपूर्ण रहा है, क्योंकि नाटकीय संघर्ष की निर्मिति एवं उसके विकास में उसेका चरित्र सहयोगी रहा है। प्रेरणा-दायिनी, संघर्षशील, स्वाभिमानी भारतीय नारी के रूप में उसका चरित्र अपनी अनोखी विशेषता रखता है। उसके रूप में असहाय बलात्कारिता नारी का आहत स्वाभिमान उजागर हुआ है।

चैती आदिवासी मजदूर स्त्री तथा कल्लु की नवोढा पत्नी है। वह अनपढ है, किंतु कल्लु की तरह ही चालाक एवं चतुर है। उसके द्वारा कुतुहलवश मायके से लाया गया पोस्टर ही मालिक-मजदूर संघर्ष का कारण बनता है। चैती साहसी है, संघर्षशील है। अपने अधिकारों के प्रति सचेत है। अपने स्वायत्त अधिकारों की प्राप्ती के लिए वह अपने

पति को भी सजग बनाती है, तथा उसे संघर्ष की प्रेरणा देती है। संघर्ष में उसका साथ देती है। वह शीलरक्षा के लिए सजग, सक्रिय युवति है। आत्मरक्षा एवं आत्मसम्मान के लिए पटेल जैसे शोषक से भी लडती है। उसकी हवेली की नौकरी का साफ-साफ इन्कार करती है। अंत में उसे मजबूरीवश हवेली की नौकरी स्वीकार करनी पडती है। उसके द्वारा शोषक वर्ग की वासना का शिकार बनी हुअी भारतीय असहाय नारी की करुण वेदना साकार हुअी है।

कुल मिलाकर चैती का चरित्र एक परिश्रमी, साहसी स्वाभिमानी, संघर्षशील, शीलसंवर्धन के प्रति सचेत, अधिकार प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील, दृढनिश्चयी आदिवासी नारी का चरित्र है, जो कथाविकास एवं संघर्ष को प्रवाहित करने में बडा सहायोगी रहा है। इस दृष्टि से नाटक में उसका चरित्र प्रभावी एवं अनूठा बन पडा है।

४.४.२.५ पटेल :

पटेल एक खलनायक के रूप में नाटक में विद्यमान है। सत्ता-सुविधा की प्राप्ति के लिए भ्रष्टाचार एवं शोषणतंत्र का रास्ता अपनानेवाला, आधुनिक शोषकवर्ग का वह प्रतिनिधी पात्र है। कल्लु के चरित्र की पृष्ठभूमि पर उसका चरित्र अधिक उभर आया है।

छोटेलाल पटेल वन का ठेकेदार तथा आदिवासी प्रांत का सर्वेसर्वा है। आदिवासी प्रांत की संपूर्ण जमीन प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से उसीकी है। आदिवासी मजदूरों को केवल एक रुपिया मजदूरी में, उसकी खेती-कारखाने में कडी मेहनत करनी पडती है। अपनी स्वार्थपूर्ती एवं धनप्राप्ती की लालसा से वह आदिवासी समाज का निर्मम शोषण करता है। अपने शोषणतंत्र को बनाये रखने के लिए उसने रिश्वतबाजी के बल पर पुलिस

वर्ग एवं प्रशासनव्यवस्था को भी खरीद लिया है। अत: आदिवासी समाज को पटेल की एकाधिकार तानाशाही में ही अपना जीवनयापन करना पडता है। पटेल के चरित्र द्वारा लेखक ने यह भी सूचित किया है, कि मजदूर-वर्ग की जरा-सी संघर्षचेतना भी बडे-बडे शोषक वर्ग को कैसे अस्वस्थ बनाती है। पटेल सभी साधन अपनाकर अपनी सत्ता को बनाये रखता है।

भ्रष्ट, लाचार, सुविधाभोगी, स्वार्थी, आदिवासी वर्ग का निर्मम शोषक जंगल का सर्वेसर्वा पटेल के चित्रण में लेखक को पूरी सफलता मिल चुकी है। पटेल का चरित्र स्वाभाविक रूप से यथार्थ धरातल पर प्रस्तुत होता है। इसप्रकार पटेल का चरित्र खलनायकी प्रवृत्ति से परिपूर्ण शोषक वर्ग का चरित्र है।

गौण पात्रों में सुखलाल का चरित्र स्वार्थी, आत्मकेंद्री लाचार, व्यक्ति का चरित्र है। पैसाप्राप्ती के लिए वह पटेल जैसे भ्रष्टाचारी शोषक वर्ग का साथ देता है। मजदूर वर्ग का शोषणकरने में वह पटेल की मदद करता है। पैसा एंव सत्ता प्राप्ति के लिए वह अपना धर्म, कर्त्तव्य ईमान, इज्जत यहाँ तक की अपनी पत्नी को भी बेचता है। उसका चरित्र वस्तुत: साधारण लाचार व्यक्ति का चरित्र है।

फॉरेस्ट अफसर का चरित्र भी भ्रष्टाचारी निष्क्रीय अधिकारी का प्रतिनिधीत्व करता है। अपना कर्तव्य छोडकर विलासी जीवन में रत, सुविधा भोंगी अधिकारी का वह प्रतिनिधित्व करता है। अन्य पात्रों में गुरुजी, वृध्द, कीर्तनकार का साथी, गीत-नृत्य में सहभागी आदिवासी नारियाँ आती है, जो कथाविकास एवं मुख्य पात्रों के चरित्रविकास में सहायक सिध्द हुअी हैं। अप्रत्यक्ष पात्रों में 'राघोबा' का चरित्र मजदूर युनियन के संघनेता के रूप में उभरता है।

कुल मिलाकर पात्र योजना तथा चरित्रचित्रण की दृष्टि से 'पोस्टर' एक सफल, प्रभावकारी रचनाहै। पात्रों के नाम न देकर उन्हें मजदूर-१, मजदूर-२ तथा श्रोता-१, श्रोता-२ इसप्रकार उन्हें संज्ञावाचक शब्दों से प्रस्तुत कर यथार्थता का परिचय दिया है। गौण पात्र भी मुख्य पात्रों के चारित्रिक विकास में सहायक रहे हैं। मुख्य पात्रों का चरित्रविकास परिवेश एवं परिस्थिति सापेक्षता में होता है। अत: कहा जा सकता है, कि 'पोस्टर' चरित्रचित्रण एवं पात्रयोजना की दृष्टि से एक सफल नाट्यकृति है।

४.४.३ **कथोपकथन** :

नाटक में पात्रों का पारस्परिक वार्तालाप कथोपकथन कहलाता है। कथोपकथन तत्व नाटक का महत्वपूर्ण तत्व है। कथोपकथन नाटक में सजीवता का संचार करते हैं। कथ्य को गतिशील बनाते हैं। पात्रों के चारित्रिक विकास में कथोपकथन अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। नाटक के कथोपकथन सरल, संगत, सुबोध, एवं प्रभावकारी होने चाहिए। कथोपकथनो में पात्रों के अंतर्द्वन्द्व को उद्घटित करने की क्षमता होनी चाहिए। लम्बे कथोपकथन नाटक की कथा में क्लिष्टता तथा अवरोध उत्पन्न करते हैं। अत: कथोपकथन संक्षिप्त एवं सारगर्भित हो।

आधुनिक नाटक के कथोपकथन यथार्थ दृष्टि लेकर चलते है। अत: उनमें स्वगतकथनों का स्थान लुप्त होता जा रहा है। उसमें पात्रानुकूलता, परिस्थिति- सापेक्षता आ रही है। आजकल नाटक के कथोपकथन समसामायिक युगबोध को लेकर चलते हैं। कथोपकथनों की बोधगम्यता पर ही नाटक की सफलता एवं प्रभावशीलता निर्भर करती है। कथोपकथन का स्थान नाटक में अत्याधिक महत्वपूर्ण रहता है।

'पोस्टर' एक सामाजिक यथार्थवादी नाटक है। वह आदिवासी प्रदेश की वास्तव समस्या को यथार्थ दृष्टि से प्रस्तुत करता है। नाटकीय संवादों में भी यही यथार्थ दृष्टि अपनायी गयी है। 'पोस्टर' के कथोपकथन अपनी परिवेशगत विशेषता तथा स्वाभाविकता के साथ प्रस्तुत होते हैं। यही कारण है, कि वे अधिक सरल एवं सुबोध बन गए हैं। पात्रानुकूलता, स्थल-काल सापेक्षता उसकी स्वाभाविक विशेषताएं रही हैं।

'पोस्टर' के कथोपकथन चरित्रोद्घाटन की क्षमता से युक्त हैं। नाटक में कीर्तनकार के कथोपकथन कीर्तनशैली के अनुरूप व्याख्यात्मक, उपदेशात्मक हैं। कीर्तनकार नाटक का सूत्रधार है। संपूर्ण कथा एक सूत्र में बाँधने की, निवेदन करने की जिम्मेदारी उस पर है। अत: उसके कथोपकथन लम्बे भाषण जैसे बन गए हैं, किंतु उससे नाटक की स्वाभाविकता में अवरोध उत्पन्न नहीं होता। कीर्तनकार के कथोपकथन नाटक में उसकी भूमिका एवं शैली के अनुसार ही उपस्थित हैं। अत: वे स्वाभाविक बन पड़े हैं। कथात्मकता, सूत्रात्मकता, समन्वयवादी भूमिका से वे युक्त हैं। उसमें हारे हुए मनों को फिर से जोडने की, आशावादी जीवनदृष्टि देने की क्षमता है। कीर्तनकार के निम्नलिखित कथोपकथन युवा के मन की निराशा एवं अवसाद को दूर कर उसे नयी आशावादी दृष्टि देते हैं। " ----- इस तरह आस्था छोडने से काम नहीं चलता भाई। कहीं तो कुछ विश्वासों में जीना ही पडता है। ----- मेरी प्रार्थना है, कि तुम बैठो। -----"[११]

कीर्तनकार के ये कथोपकथन श्रोताओं का आत्मविश्वास बढानेवाले, उनके मन को धीरज प्रदान कर उनमें नयी चेतना निर्माण करनेवाले हैं। पृष्ठ क्र. ८५, ८६ के संवाद कीर्तनकार की कथात्मक प्रणाली एवं ब्रह्मनिरूपण को स्पष्ट करते हैं। जैसे,

कीर्तनकार : "लेकिन एक आदमी इस युध्द के वातावरण में भी सोच रहा है ---- और तुम तो जानते हो उसका नाम है

अर्जुन। वह देख रहा है पिता के भाईयों को, पितामहों को, आचार्यों को, मामों को, भतीजों को, मित्रों कों, ससुरों को। उसका हृदय शोक और करूणा में डूबा हुआ है। उसके अंग शिथिल पड रहे हैं और मुंह सूख रहा है।--- "[१२]

कीर्तनकार के कथोपकथन श्रोताओं से मानसिक तौर पर सुसंवाद स्थापित कर उन्हे उनकी समस्यामूलक स्थिति से उपर उठाने की कोशिश करते हैं। सच्चे धर्म की व्याख्या कर उन्हे नयी जीवनवादी दृष्टि देते हैं। पृष्ठ क्र. ८६ का गीता के श्लोक का निरूपण इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। जैसे,

कीर्तनकार : "हे अर्जुन, नपुंसकता को छोड। तुच्छ हृदय की दुर्बलता को त्यागकर युध्द के लिए खडा हो जा। ---- और यदि तू इस धर्मयुक्त संग्राम को नहीं करेगा तो स्वधर्म को खोकर पाप को प्राप्त होगा। अपने इन अधर्मी रिश्तेदारों के शरीरों का मोह--- इस नाशवान शरीर का मोह ---- अर्जुन, सत्य तो आत्मा ही है। उसी की पुकार सुन।"[१३]

इसप्रकार कीर्तनकार के कथोपकथन सुसूत्रता, समन्वयात्मकता के साथ ही आदर्शवादी मानवीय दृष्टि से युक्त हैं।

नाटक में कल्लु एवं चैती के संवाद भी उनकी स्थिति के अनुकूल एवं कथ्य को विकसित करने में सक्षम हैं। मालिक-मजदूर संघर्ष की चेतना का सहज स्वाभाविक विकास उनमें दिखाई देता है। इस दृष्टि से कल्लु व्दारा मजदूरों से किए गए वार्तालाप अधिक महत्त्वपूर्ण हैं, जैसे -

कल्लु : "अरे, जरा लडकर तो देखे। पटेल ज्यादा करेगा तो हम लोग राघोबा के पास जायेंगे। अगर वह छोडने के लिए बोलेगा तो दारू छोड देंगे। अगर उस गाँव के लोग हिम्मत दिखा सकते हैं ----- तो हम क्यों नहीं।

मजदूर-४ : हम झंझट में नहीं पडना चाहते।

कल्लु : मैं कहता हूँ इसमें कोई झंझट नहीं। मैं गुरूजी सेही चार कागज बनवाता हूँ। यहाँ चिपका देंगे ---- पहली बार जैसे चुप बैठे थे ----- उसी तरह बैठेंगे ----- चाहे कितना भी चीखे-चिल्लाये, कुछ नहीं बोलेंगे। अगर झुक गया तो सबका फायदा है। आजमाकर देखने में क्या बुराई है।

मजदूर-४ : अगर मुसीबत आयी तो ---- ?

चैती : मैं बोलूंगी - मैंने चिपकाया है कागज। मैं बोलूंगी - अपने मायके से लायी थी कागज। मारेगा तो मैं मार खा लूंगी जो कुछ होगा मैं और कल्लु झेल लेंगे ----- क्या तुम लोग चुप भी नहीं बैठ सकते। "[१४]

इसप्रकार कल्लु एवं चैती के ये कथोपकथन संघर्ष चेतना से युक्त हैं। उसमें शोषणनीति के खिलाफ मजदूरों को एकसंघ बनाने की शक्ति है। इन कथोपकथनों में जहाँ कल्लु एवं चैती के चरित्रगत विशेषताओं की झाँकी है, वहाँ सरलता एवं सादगी से भी युक्त हैं।

नाटक में युवा, श्रोता एवं कीर्तनकार के कथोपकथनों में पात्रानुकूलता विद्यमान है। युवा के संवाद उसकी उद्विग्न मानसिकता एवं सत्योद्घाटन में आयी हुयी असफलता को दर्शाते हैं। नाटक में पटेल एवं फॉरेस्ट अफसर के कथोपकथन भी उनकी मानसिकता एवं व्यवहार दृष्टि के अनुसार ही रखे गए हैं। उनके कथोपकथनों द्वारा उनकी चरित्रगत कमजोरीयाँ स्वाभाविकता से सामने आती हैं। जैसे -

अफसर : कोठी तो बडी आलीशान है, पटेल। बिल्कुल जंगल में मंगल है। वाह भाई, मान गये। ये सब ठाट तो हमारे बडे अफसर के यहाँ भी नहीं है।

पटेल : सब आप ही लोगों का दिया हुआ है, सर। हमारे बुजुर्ग छन्नुलालजी कहते थे - जनता की सेवा करो ---- फिर जनता खुद आपका खयाल रखती है -----

अफसर : वह तो हमारा भी अनुभव कहता है।"[१५]

प्रस्तुत कथोपकथन अफसर एवं पटेल की विलासिता, शोषणनीति को स्पष्ट करते हैं। नाटक में मजदूर, सुखलाल, अखंडानंद, वृध्द आदि के संवादों में भी यही पात्रानुकूल स्थिति अपनायी गयी है।

'पोस्टर' के संवाद वातावरण निर्मिति की क्षमता से युक्त हैं। वे एक ओर कथ्य को सूचित करते हैं तो दूसरी ओर वातावरण निर्मिती करने में भी सफल रहे हैं। नाटक में पटेल के कथोपकथन इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। पृष्ठ क्र. १००, १०१ के पटेल के कथोपकथन यहाँ महत्त्वपूर्ण है।

पटेल : "जंगल है चारो ओर, बियाबान जंगल। उससे लगे हुए ऊँचे-ऊँचे पहाड। जंगल में है पेड, साल, सागौन और महुए के। यहाँ होता है गोंद, चिरौंजी, आँवला, बहेरा और आप बीडी पीते है, उसके पत्ते ---- यानी तेंदू के पत्ते।"[१६]

"वे लोग लकडी काटते हैं, जंगल से हर्रा, बहेरा, आंवला वगैरह इकठ्ठा करते हैं, फिर हमारे गोदाम वगैरह में उसकी छँटाई - सफाई करते हैं ----- क्या करें यहाँ कोई मार्केट वगैरह तो है नहीं, सो माल बम्बई, कलकत्ता और दूसरे शहरों में भेजना पडता है। क्या करें ---- जहमत उठानी पडती है। न करें तो इन बेचारों की रोटी-रोजी चले कैसे।" [१६]

इसमें कथात्मकता के साथ अधिक लम्बाई आ गयी है, फिर भी वह अखरती नहीं, क्योंकि उसमें दर्शको को अपने साथ ले चलने की, जंगल के वातावरण को

मूर्त करने की अद्भुत क्षमता है। दर्शक उस वातावरण में खो जाते हैं।

'पोस्टर' के संवाद जगह-जगह पर स्वाभाविक लयबध्दता एवं गेयता से युक्त हैं। यह इस नाटक की अनोखी विशेषता रही है। ये लयबध्द संवाद नाटकीय कथ्य में गतिशीलता लाते हैं। नाटकीय प्रभाव को बढाते हैं। दृश्य की सुबोधता एवं घटना प्रकाशन की स्वाभाविकता की दृष्टि से ये संवाद उत्कृष्ठ बन पडे हैं। साथ ही इसमें थके हुए शरिरों में नयी स्फूर्ति निर्माण करने की अद्भुत शक्ति है।

जैसे, " सुखलाल - काम करो भाई
सब मजदूर - काम करो।
सुखलाल - देश का उँचा
सब मजदूर - नाम करो।
सुखलाल - काम करो भाई
सब मजदूर - काम करो।
सुखलाल - राजा बोले
सब मजदूर - काम करो।
सुखलाल - रानी बोले
सब मजदूर - काम करो।
सुखलाल - गुल्लु बोले
सब मजदूर - काम करो।
सुखलाल - उल्लु बोले
सब मजदूर - काम करो।
सुखलाल - देश का उँचा
सब मजदूर - नाम करो। ------- "[१७]

इसप्रकार प्रस्तुत संवादों में जहाँ गेयता, संक्षिप्तता, लयबध्दता है, वहीं पर कथ्य की सार्थक अभिव्यक्ति भी है। इससे ये संवाद

बडे रोचक एवं सरल बन पडे है। इनमें संगीत तत्व की झाँकी मिलती है।

अत: कहा जा सकता है, कि 'पोस्टर' के संवाद सहज, स्वाभाविक, संक्षिप्त एवं सुबोध हैं। उनमें चरित्रोद्घाटन की क्षमता के साथ-साथ वातावरण निर्मिती की भी अनोखी विशेषता है। वे एक ओर कथ्य को भी सूचित करते हैं और दूसरी ओर कथाविकास एवं घटना प्रकाशन में भी सहायक बन पडे हैं। कुल मिलाकर संवाद नाटकीय प्रभाव को बढाने में सक्षम एवं सफल रहे हैं।

४.४.४ देश, काल तथा वातावरण :

देश, काल तथा वातावरण यह नाटक का महत्वपूर्ण तथा अनिवार्य तत्व है। इसके बिना नाटक कृत्रिम एवं अधूरा रह जाता है। नाटक की कथावस्तु जिस देश में, जिस काल में घटित होती है, उसी देश-काल का नाटककार को ध्यान रखना पडता है। तभी वह नाटक स्वाभाविक बनकर प्रस्तुत हो सकता है।

यह तत्व नाटक में सजीवता निर्माण कर उसे प्रभावशाली बनाने में सहायक होता है। देश काल वातावरण के उचित प्रयोग से नाटकीय कथावस्तु, घटनाएं, पात्र,अभिनय, भाषा आदि अनुकूल बनकर उनमें सहजता आती है। अत: नाटककार को कथ्य के अनुसार देश-काल वातावरण को रखना चाहिए। कथावस्तु के देश-काल के अनुसार नाटककार को उस देश की भाषा, रहन-सहन, रीतिरिवाज, समय का प्रभाव, पात्रों की वेशभूषा आदि स्थितियों का विचार कर उन्हें नाटक में प्रयुक्त करना पडता है, जो नाटक की सफलता की दृष्टि से अत्यंत अनिवार्य है। इसप्रकार देश-काल वातवारण का नाटक की सफलता में अत्याधिक योगदान रहता है।

डा. शंकर शेष का 'पोस्टर' आदिवासी जीवन की वास्तव सच्चाई यथार्थ दृष्टि से प्रस्तुत करता है। अत: नाटकीय कथ्य के अनुसार ही लेखक ने देश-काल वातवारण का प्रयोग है। देश-काल, रहन-सहन, परंपरा, भाषा, पहनावा आदि सभी दृष्टि से प्रस्तुत नाटक का वातावरण सार्थक रहा है।

नाटक के आरंभ में कीर्तनकार ब्रहमनिरूमण करते हुए महाभारत के युध्द का वातावरण सजीव करता है। युध्द की भयंकारीता, विशालकाय सेना, हाथियों तथा घोडों की चिंघाड, महारथियों के रथों की फडकती हुअी पताकाएं सबकुछ भाषा, अभिनय तथा कथनात्मकता से मूर्त किया गया है। इसी समय अपने ही लोगो को मारने के कशमकश में घुला अर्जुन का अंतर्द्वन्द्व, सब कुछ नाटककार ने सशक्त भाषा द्वारा साकार किया है, जिससे युध्दभूमि का वातावरण स्वाभाविक रूप से निर्माण हुआ है। वैसे कोई भी दृश्य प्रत्यक्षत: मंच पर उपस्थित नहीं होता, फिर भी दर्शक अपने दृश्यपटल पर, अनुभव के स्तर पर हर दृश्य देख पाते हैं। वातावरण की सफलता ही इसके पीछे कारणभूत रही है।

कीर्तनकार के ब्रहमनिरूमण में रूकावट पैदा करनेवाला युवा बलात्कार की घटना से, अत्यंत उध्दिग्न मानसिकता से कीर्तन बंद करवाना चाहता है। सत्ताधारी व्यक्ति व्दारा गरीब लडकी पर हुए अत्याचर, बलात्कार की घटना का वह संकेत करता है। उस वक्त मंदिर का प्रांगण, मंदिर के पिछवाडे में घनी झाडीयों में हुअी बलात्कार की घटना लडकी की चीखें, अत्याचारी की धमकियाँ, युवा का सहम जाना, पुलिसवर्ग की नि ष्क्रियता, वृत्तपत्र का भय, लडकी के बाप का भय सब कुछ लेखक ने केवल वातावरण सूचक शब्दों से सजीव बनाया है। बिना किसी उपकरण, साजसज्जा तथा दृश्य के सारी घटनाएं सजीव बनकर प्रस्तुत होती है।

युवा के मानस का भय दूर कर शोषण तंत्र के पर्दाफाश के लिए कीर्तनकार उसी से समानता रखनेवाली आदिवासी कथा प्रस्तुत करते है। संपूर्ण कथा घने जंगल की पृष्ठभूमि में प्रस्तुत होती है। आदिवासी जीवन का पिछडापन, असभ्यता, देहाती भाषा, उनका रहन-सहन, परंपरा संस्कृति आदि सभी सशक्त संवादों एवं गीतों व्दारा साकार किया गया है। आदिवासी गाँव एवं वहाँ की जीवनपध्दती का परिचय निम्नांकित गीत के व्दारा स्वाभाविकता से हुआ है -

"---- सौ-दो सौ की बस्ती थी
हां सौ- दो सौ की बस्ती थी
जीना चाहे महंगा हो
पर मौत बहुत ही सस्ती थी ----
चाहे कितना भी तैराओ ----
वह पत्थर की नाँव था -----
---- लोग वहाँ पर रहते थे
जीवन का दु:ख सहते थे
मालिक जैसा कहता था
वैसा ही वे करते थे
वहाँ न थोडा कुछ भी बदला
धरमराज का दाँव था ----
--- था पटेल वहाँ का राजा
टका सेर भाजी टका सेर खाजा
चार चिरौंजी हरा बहेरा ----
थका-थका सा चेहरा-चेहरा ---
वहाँ न पनपता कैसे कुछ भी ----
वह बरगद की छाँव था ----
हो एक पुराना गाँव था।" [१८]

इस गीत में आदिवासी जीवन की वास्तव स्थिति मूर्त हुअी है। वहाँ का जनजीवन, जमींदार वर्ग का शोषणतंत्र, उत्पादन के तथा जीविका के साधन सभी की जानकारी प्रस्तुत गीत से स्वाभाविक रूप से मिलती है। आगे चलकर पृष्ठ क्र. १०० तथा १०१ का पटेल का लम्बा कथन संपूर्ण आदिवासी वातावरण को मूर्त करता है। आदिवासीयों का जनजीवन, पूर्व परंपरा से चली आयी जमींदारी वर्ग की एकाधिकार सत्ता, शोषणतंत्र, जंगली उत्पादन, वहाँ की अपनी सभ्यता सभी की जानकारी इस लम्बे कथन से मूर्त हुअी है।

आदिवासीयों का रहन-सहन, आचार-विचार, व्यवहार पध्दति आदि की जानकारी "मंडई जावो, मंडई जावो ----मंडई जावो रे ----।" इस छत्तीसगढी लोकनृत्य के व्दारा सार्थकता से हुअी है। उसीतरह पच्चीस पैसे मजदूरी बढ जाने पर मजदूरों की संतोषजनक मानसिकता "मंगल दिन आज बना घर आया।" गीत के व्दारा स्वाभाविकता से व्यक्त हुअी है।

चैती व्दारा अनजाने में लाया हुआ 'पोस्टर' मालिक-मजदूर संघर्ष का कारण बनता है। आगे की समूची कथा एक गंभीर वातावरण में चलती है। मजदूरों का पटेल की शोषणनीति के खिलाफ चल रहा मूक सत्याग्रह, पटेल की घबराहट आदि सभी की जानकारी "चुप्पी की भाषा होती है, होती है भाई होती है।" इस गीत के व्दारा दी गयी है, जिससे नाटक का संघर्षमय वातावरण मूर्त हुआ है। संघर्ष की तीव्रता मजदूरों का एकात्म सत्याग्रह, पटेल की बेचैनी सब कुछ इस गीत के व्दारा साकार हुआ है। चैती और कल्लू का मानसिक संघर्ष तथा सभी आदिवासीयों की स्वअधिकार प्राप्ति के प्रति जागृति दर्शानेवाला गीत "भोर भयी जन जागो।" बहुत ही सार्थक बन पडा है।

इसप्रकार मजदूरों का देहाती ढंग का पहनावा, देहाती भाषा, पटेल की माखाडी भाषा, अफसर की स्वार्थलोलुप व्यवहारी भाषा, अखंडानंद की पाखंडी भाषा, उनका पहनावा आदि भी वातावरण निर्मिति में बहुत ही सार्थक रहे है। समस्त नाटक में वातावरण निर्मिति के लिए उपकरण, प्रत्यक्ष दृश्ययोजना आदि का सहारा नहीं लिया गया है। सशक्त एवं मार्मिक संवाद, सार्थक गीतयोजना वातावरण को मूर्त करती है। वातावरण निर्मिती के लिए अधिक प्रयास नहीं करने पडते। यह नाटककार का अनोखा कौशल है। भाषा की सशक्तता भी इस दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण रही है। वातावरण की दृष्टि से कहीं भी ढीलापन या कृत्रिमता यहाँ अनुभव नहीं होती। कथ्य के अनुसार ही यहाँ वातावरण का सार्थक प्रयोग किया गया है।

४.४.५ उद्देश्य :

हर कृति एक सोद्देश्य रचना होती है। कृतिकार अपने सुनिश्चित मंतव्य को विचार प्रवाह को योजनाबध्द रूप से अपनी कृति व्दारा प्रस्तुति देताहै, चाहे फिर वह उपन्यास हो, कहानी हो या नाटक। नाटककार के उद्देश्य के अनुसार ही नाटकीय कथा, घटना, पात्र, प्रसंग परिचलित होते हैं। समस्त नाटकीय क्रियाव्यापार व्दारा नाटककार उद्देश्य को दर्शकों तक पहूँचाता है।

उद्देश्य तत्व समस्त नाटकीय तत्वों में आत्मतत्व के रूप में स्वीकृत है, क्योंकि इसके बिना नाटक का कोई मूल्य या महत्व नहीं है। मानवी जीवन का चित्रण करना, समसामायिक समस्याओं की अभिव्यक्ति करना, रंजन के साथ ही दर्शकों की कर्तव्यबुध्दी, विवेकबुध्दि जाग्रत करना, सामाजिक का प्रबोधन करना नाटक के सर्वोपरी उद्देश्य रहे हैं।

इसी दृष्टि से नाटककार भिन्न-भिन्न उद्देश्य लेकर नाटक की योजना करते हैं। किसी भी नाटक की कलात्मक ऊँचाई एवं वैचारिक गहनता तथा भावसृष्टि नाटककार के महान लक्ष्य, उसकी प्रेरणा तथा उसकी अनुभूति की गहराई पर ही आधारित रहती है। प्राचीन भारतीय नाट्यसिध्दांतों के अनुसार आदर्शवादिता की ओर नाटककार का झुकाव रहता था। उसमें असत्य पर सत्य की, अन्याय पर न्याय की विजय दिखलाई जाती थी, परंतु आज नाटककार की दृष्टि वास्तव चित्रण की ओर रही है। आधुनिक नाटक के उद्देश्य में वर्तमान मनुष्य के जीवन की यथार्थ झाँकी मिलती है।

स्वतंत्रता प्राप्ती के पश्चात भारत देश अंग्रेजो सत्ता की दासता से मुक्त हुआ। देश की सामाजिक, आर्थिक, राजकीय स्थिति में परिवर्तन आया। भारतीय समाजमानस में खुशी की लहर दौड गयी, किंतु भारतीय श्रमिक वर्ग के जीवन में किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं आया। स्वतंत्रतापूर्व स्थिति में उनकी हालत जैसी थी, स्वतंत्रता प्राप्ती के बाद भी वैसी ही रही। फर्क केवल इतना ही है, कि पहले अंग्रेजी शासनसत्ता उनका खून चूसती थी, उसके स्थान पर अब भारतीय शासक आ गये।

आज हमारा भार देश इक्कीसवीं सदी की ओर उन्नति के प्रगतिशील कदम बढा रहा है। सभी दृष्टी से वह विकास के नये सोपान प्राप्त कर रहा है, उसी भारत देश का एक छोटासा आदिवासी कोना आज भी युग-युग की जमींदारी वर्ग की दासता में, निरीह शोषण की भीषण आग में झुलस रहा है। भारत जैसे लोकशाही जनतंत्र में भी श्रमिक मजदूर वर्ग की हो रही दुरावस्था, अपने ही लोगों व्दारा उनका हो रहा शोषण, उसके लिए जिम्मेदार परिस्थितियाँ आदि को समाज के सामने लाना, तथा उस दृष्टि से समाजमानस को चिंतनके लिए प्रेरित करना नाटककार का मूल उद्देश्य है।

कीर्तनकार के व्दारा ब्रहमनिरूपण के पश्चात कीर्तन में प्रस्तुत आदिवासी कथा आदिवासी जीवन की वास्तवता को मूर्त करती है। पटेल जो जमींदार वर्ग का प्रतिनिधी पात्र है, केवल एक रूपिया मजदूरी पर आदिवासी मजदूरों से अपने कारखाने में कडी मेहनत करवाता है। यहाँ उनके श्रमिक शोषण के साथ-साथ उनका आर्थिक शोषण भी होता है। समय-समय पर वह अपने लिए तथा आनेवाले वन-अधिकारीयों की वासनापूर्ती के लिए आदिवासी युवतियों का शरीरशोषण करता है। आदिवासी वर्ग अज्ञान एवं अनपढ अवस्था के कारण इसका विरोध भी नहीं कर सकता। आदिवासी जीवन की यह विवशता, उनकी करूण स्थिति समाज के सामने लाना लेखक का उद्देश्य रहा है।

आदिवासी प्रांत में कार्यरत पुलिसयंत्रणा, प्रशासक व्यवस्था भी आदिवासी जीवन के शोषण को रोक नहीं सकती, क्योंकि वह भी खुद इस शोषणतंत्र में शामील है। पटेल जैसे स्वार्थांध जमींदार पैसे एवं सुविधा के बल पर शासनसत्ता को भी पंगु बना देते है। जो रक्षक हैं, वही आज भक्षक बन गए हैं। पुलिस, प्रशासक, जमींदार सभी मिलकर इन आदिवासीयों का सर्वांग शोषण कर रहे हैं। आज भी यह चल रहा है। बिहार के आदिवासी प्रांत में आज भी यह शोषणतंत्र बलवत्तर रहा है। जिसे देखकर, समझकर भी शासनसत्ता कुछ भी नहीं कर सकती। डा. शेष ने मध्यप्रदेश के बस्तर तथा नारायणपूर जिले के आदिवासी जनजीवन को वास्तव दृष्टि से 'पोस्टर' में मूर्त किया है। आदिवासी जनजीवन का हो रहा सर्वांग शोषण, उस शोषण के लिए जिम्मेदार सभी सदस्य, तथा उस निर्मम शोषण से हो रही आदिवासी जीवन की करूण त्रासदी को लेखक ने यहाँ उजागर किया है।

'पोस्टर' के व्दारा लेखक ने यह भी सूचित किया है, कि व्यक्ति को कभी भी अपने अन्याय-अत्याचार को चुपचाप नहीं सहना

चाहिए, बल्कि एकसंघ होकर उसका विरोध करना चाहिए। नाटक में मजदूरों व्दारा लगाया गया पोस्टर पटेल जैसे जमींदार को भी कैसे बेचैन कर देता है। उसकी एकाधिकार सत्ता को भी चुनौती देता है। अत: आवश्यकता है डटकर अन्याय का विरोध करने की। सफलता की अंतिम सीढी तक संघर्ष को जारी रखने की। मजदूरों को अपना संघर्ष बीच में ही नहीं छोडना चाहिए था। अंत में सफलता तो मिलती ही है, किंतु उसके लिए एकात्मता से संघर्षसूत्र को जारी रखना चाहिए। निर्भयता से, डटकर अन्याय का विरोध करना चाहिए। यही नाटककार ने अंत में सूचित किया है। नाटक का "भोर भयी जन जागो" यह गीत इस दृष्टि से अत्यधिक सार्थक रहा है।

इसप्रकार 'पोस्टर' का उद्देश्य वर्तमान आदिवासी जनजीवन का वास्तव चित्रण करना है। आदिवासी प्रांत की वास्तव समस्याओं को पाठक या दर्शक के सामने लाना, तथा उन्हें चिंतनशील, कृतिशील बनाना नाटककार का उद्देश्य रहा है। नाटककार के उद्देश्य को सफल बनाने में पात्रयोजना, उनके सशक्त संवाद, सक्षम भाषा तथा प्रसंगानुरूप प्रयुक्त सार्थक गीतयोजना भी अधिक सक्रीय रही है। नाटककार को अपने उद्देशपूर्ती में पूरी सफलता भी मिल चुकी है। इसप्रकार उद्देश्य की दृष्टि से भी 'पोस्टर' एक सार्थक कृति लगती है।

४.४.६ भाषाशैली :

पाश्चात्य विद्वानों ने नाट्यसिध्दांतों में भाषाशैली तत्व पर भी सूक्ष्मता से प्रकाश डाला है। नाटक में भाषा तथा शैली का अपना विशिष्ट स्थान रहता है। भाषाशैली नाटकीय पात्रों के विचारों की वाहक एवं नाटककार की नाट्यप्रतिभा की परिचायक होती है। नाटक

में भाषाशैली का प्रयोग करते समय नाटक के कथ्य, घटना, देशकाल तथा समय के अनुसार उसका रूप निश्चित करना पडता है। नाटक की भाषा पात्रों की मनोदशा के अनुकूल तथा कथ्य को सूचित करने में सक्षम होनी चाहिए। सभी प्रकार के दर्शकों की मानसिकता का विचार कर नाटक में उचित भाषाशैली का निर्वाह करना पडता है। अत: नाटक में भाषागत क्लिष्टता एवं जटिलता का प्रयोग न हो। भाषा पात्रों की स्वाभाविक विशेषताओं तथा परिस्थितियों के अनुरूप हो। वह माधुर्य, ओज, भावुकता, आवेग, वैचारिकता, व्यंगात्मकता, तार्किकता और नाट्यानुकूलता आदि सक्षमताओं से युक्त हों। वह अभिनय संपन्न हो। इसप्रकार नाटकीय भाषा शिल्पविधान की दृष्टि से औचित्यपूर्ण होनी चाहिए। साहित्यके दूसरे विधाओंकी भाषा में और नाटक की भाषा में फर्क है। अभिनय के अनुकूल शब्दयोजना नाट्य भाषा की विशेषता है।

डा. शेष का 'पोस्टर' भाषा की दृष्टि से एक नया प्रयोग रहा है। भाषा एवं शैली की दृष्टि से 'पोस्टर'की अपनी विशेषताएं दिखाई देती हैं। 'पोस्टर' की भाषा पात्रानुकूल, संकेतसूचक, कथ्यसूचक एवं लयबध्द है। वह सरल, सुबोध, मार्मिक, अर्थपूर्ण एवं प्रवाही है। वैसे देखा जाए तो, नाटक की सफलता अधिकतर नाटकीय भाषाशैली पर ही अवलंबित रहती है, क्योंकि समस्त नाटकीय क्रियाव्यापार, घटनाएं, कथ्य आदि सशक्त भाषा के व्दारा ही मूर्त होता है।

'पोस्टर' भाषा की दृष्टि से एक मौलिक एवं नूतन प्रयोग रहा है। नाटककार ने भाषा की दृष्टि से यहाँ मार्मिक प्रयोग किए हैं। भाषा अपेक्षाकृतसरल एवं प्रवाही रही है। उसमें कहीं भी क्लिष्टता तथा कृत्रिमता नजर नहीं आती। मजदूरों की भाषा, सुखलाल तथा गुरूजी की भाषा में सरलता एवं सादगी है। उसमें देहाती भाषा, अंचलविशेषता

विशेष रूप से दिखाई देती है, जो आदिवासी देहाती वातावरण को मूर्त करने में सक्षम रही है। इसीतरह अफसर एवं पटेल की भाषा उनकी मानसिकता, हैसियत तथा स्वभाव के अनुकूल रही है। उसमें अंग्रेजी शब्दों का अधिक प्रयोग वास्तव स्थिति का सूचक रहा है। कीर्तनकार की भाषा उसकी कीर्तनशैली के अनुसार औचित्यपूर्ण रही है। उसमें भावात्मकता, भावगंभीरता, व्याख्यात्मकता, सिध्दांतनिरूपण आदि विशेषताएं सम्मिलित हैं। कल्लु, चैती की भाषा में उनकी चारित्रीक विशेषताएं अभिव्यक्त है, तो सुखलाल की भाषा उसकी चरित्रगत लाचारी को प्रकट करती है।

दृश्यात्मकता एवं वातावरण प्रधानता 'पोस्टर' की भाषाशैली की सर्वोपरी विशेषताएं रही है। रंगमंच पर कोई भी घटना या प्रसंग बिना किसी उपकरण या माध्यम के सशक्त भाषा व्दारा मूर्त होता है। चाहे आदिवासी जंगल का दृश्य हो, पटेल की आलिशान कोठी का दृश्य हो, कारखाने में काम कर रहे मजदूरों का दृश्य हो, वह समर्थ भाषा व्दारा सहजता से अभिव्यक्ति पाता है। सशक्त, मार्मिक, अर्थपूर्ण भाषा के कारण ही किसी भी प्रकार की मंचसज्जा तथा दृश्यविधान की आवश्यकता नहीं पडती। पात्रों के आपसी वार्तालाप ही घटना या दृश्य को सहजता से प्रस्तुत करते हैं।

'पोस्टर' आदिवासी प्रांत की वास्तव स्थिति को उजागर करता है। इसी वास्तवता को ध्यान में रखकर ही नाटककार ने भाषा के यथार्थ रूप का प्रयोग किया है। अत: इसमें अंग्रेजी, मराठी, देहाती, छत्तीसगढी, अरबी-फारसी, संस्कृत, तद्भव, नागर आदि भाषाओं तथा बोलियों के शब्द मिलते हैं। जिसका प्रयोग नाटक को अधिक स्वाभाविक एवं वास्तववादी बनाने में सफल रहा है जैसे -

४.४.६.१ अंग्रेजी शब्द :

मास्क, ब्लैक-मार्केट, फोटोग्राफर, प्राइवेट, डॉक्टर, फॉरेस्ट प्रोडयूस, ट्रायबल एरिया, स्टेज, पॅशनेबुल, ब्लैक आऊट, पोस्टर, युनियन, पार्टी, होटल, मैरीड लाईफ, रॉयल सेल्यूट, कॉम्पिटेंट, रेंजर, पोस्ट, बाथरूम, इम्पॉसिबुल, साइलेंट प्रोटेस्ट, इनकम टैक्स, सेल टैक्स, फॉरेस्ट गार्ड आदि।

४.४.६.२ तत्सम शब्द :

शय्या, शयन, स्वामी, सद्गुरू, संस्कृति, कर्म, त्रेता, प्रलय, मंत्र, प्रभु, पितामह, आचार्य, श्रम, परब्रह्म, शस्त्र, पत्रिका, प्रार्थना, दिन, सोमरस, एकदंत, नाभि, आदि।

४.४.६.३ तद्भव शब्द :

गुरू, भाई, गाँव, काम, नाँच, घरवाली, घर, नशा, मरद, रात, सूरज आदि।

४.४.६.४ देहाती शब्द :

खुस, स्वास्थ, भगत, परकार, मूरख, नामरद, सिरफ, परदेसी, धरम, दसा, मंसा, सिच्छा, पारी, कित्ति, तमासा आदि।

४.४.६.५ मराठी शब्द :

चहा, टिकली, लुगडा आदि।

४.४.६.६ अरबी-फारसी शब्द :

अखबार, लाश, कत्ल, बरक्कत, गरीबखाना, मुर्ग, मुसल्लम, साकी, जाम, मासूम, मोहब्बत, खबर, खत्म, मुकादम, खसम, इल्जाम, हुजूर आदी।

इस विभिन्न शब्दावली के साथ ही स्थान-स्थान पर सूक्तियों तथा मुंहावरों का भी मार्मिक प्रयोग हुआ है, जैसे -

४.४.६.७ सूक्तियाँ :

लातों के भूत बातों से नहीं मानते।
गन्ना मीठा हो, तो उसे जड़समेत नहीं खाया जाता।
पानी में रहकर मगरमच्छ से बैर नहीं किया करते।
धतूरा बोय के आम की आसा करना अकारन है।
दूसरों की चुपडी देखकर ललचाने से कोई फायदा नहीं।
गाय का दूध दूहा जाता है, उसका खून नहीं। आदि।

४.४.६.८ मुंहावरें :

मूंह मत खोलना, हाय-हाय करना, टट्टी पिसाब करना, टस-से-मस न होना, दाने-दाने को मोहताज कर देना, आग-बबूला होना, खटिया खडी करना, कमर टूट जाना, मार-मार के दम निकालना, सिर पर चढना, चांटे रसीद करना, बेडा गर्क हो जाना, जिस पत्तल में खाना उसी में छेद करना, काला अक्षर भैंस बराबर, हर बात में पख निकालना आदि ।

कुल मिलाकर "पोस्टर" की भाषा सशक्त, प्रवाही, सरल सुबोध एवं पात्रानुकूल रही है। कथ्य के अनुसार वह मार्मिक, सारगर्भी,

दृश्यप्रधान, वातावरण प्रधान तथा वास्तवदर्शी रही है। अत: भाषा की दृष्टि से भी 'पोस्टर' एक मौलिक एवं सशक्त कृति लगती है।

४.४.७ अभिनेयता एवं रंगमंचीयता :

नाटक प्रायोगिकता से जुडी हुअी विधा है। वह एक दृश्यकाव्य है। अत: उसका अभिनेय होना परम आवश्यक है। भारतीय नाट्यशास्त्र में अभिनय को नाटक का प्राण कहा गया है, क्योंकि अभिनय के बिना नाटक की प्रस्तुति संभव नहीं है। अत: पाश्चात्य नाट्यसिंद्धातों में भी नाटक के शिल्पविधान में इस अभिनय एवं रंगमंच तत्त्व को स्विकार किया गया है। डा. श्यामसुंदरदास इस संदर्भ में लिखते है, "अभिनय नाटक का का प्राण है और उसके बिना नाटक में सजीवता आ ही नहीं सकती।"[१९] तो, डा. रामकुमार वर्मा के मत में, "अभिनय नाटक का प्राण है, तो रंगमंच उसका शरीर, बिना शरीर के प्राण की अभिव्यक्ति संभव नहीं हो सकती।"[२०] अभिनय संपन्न नाटक की प्रस्तुति के लिए रंगमंचीय उपकरणों की भी आवश्यकता रहती है। इस दृष्टि से नाटककार को ध्वनिव्यवस्था, प्रकाशयोजना, नेपथ्यव्यवस्था, पात्रों की वेशभूषा आदि पर भी ध्यान देना पडता है। नाटक की सफल प्रस्तुति की दृष्टि से वह नितांत आवश्यक है, क्योंकि "नाटक साहित्य ही एकमात्र ऐसी विधा है, जिसमें रचना का धर्म दो बार होता है। नाटक का पहला जन्म है लेखन के स्तर पर, इसके बाद लेखक गौण जीव होता है। मंचन के साथ नाटक का दूसरा जन्म होता है .... और तभी नाटक को संपूर्णता मिलती है।"[२१] अत: नाटकीय सफलता के लिए उसके सृजनात्मक कथ्य जितने महत्वपूर्ण रहते हैं, उतने ही रंगमंचीय संकेत भी। अत: ये संकेत सरल, स्वाभाविक, वास्तवदर्शीता का उद्घाटन करनेवाले होने चाहिए। उसमें किसी भी प्रकार की कृत्रिमता तथा दुरूहता नहीं होनी चाहिए। अत: स्पष्ट है, कि

रंगमंचीयता एवं अभिनेयता का नाटक की सफलता में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रहता है।

'पोस्टर' प्रयोग की दृष्टि से नितांत नवीन एवं मौलिक कृति है। नाटककारने प्रस्तुत कृति में अभिनय तथा रंगमंच की दृष्टि से नये मौलिक प्रयोग किए हैं। यहाँ हम प्रायोगिकता की दृष्टि से 'पोस्टर' पर संक्षेप में प्रकाश डालेंगे, क्योंकि अगले अध्याय में इसी विषय पर विस्तार से विवेचन किया गया है।

'पोस्टर' आदि से अंत तक कीर्तनशैली में प्रस्तुत होता है। शायद हिंदी नाट्यसाहित्य में यह सबसे प्रथम एवं एकमेव प्रयोग रहा है, जिसमें कीर्तनकार का प्रयोग नाटक में किया गया हो। पूरा नाटक महाराष्ट्र की कीर्तन शैली में चलता है। कीर्तनकार इस नाटक का मुख्य पात्र है। वह नाटक में सूत्रधार, निवेदक एवं कथाकार के रूप में आता है। इस संदर्भ में लेखक का कथन यहाँ दृष्टव्य है - "महाराष्ट्र के कीर्तनकार एक अर्थ में "वन मैन थियेटर का" का बहुत ही अच्छा पारंपारिक रूप है। वे अच्छे खासे पढे लिखे होते हैं, शास्त्रों-पुराणों की गाथाओं और संत-वाणी का तो उन्हें अच्छा ज्ञान होता ही है, वे अपने समकालीन जीवन की घटनाओं से भी जुडे होते हैं। अनेक गायन शैलियों में उनकी गति होती है .... शास्त्रीय संगीत, मराठी नाट्य संगीत, भजन और कई बार लोक-संगीत का भी वे सार्थकता से उपयोग करते हैं। अभिनय उनकी पूरी कला में विशेष अहमियत रखता है। इसीलिए अकेला कीर्तनकार जब अपनी कलात्मक उँचाइयों को छूता है तो दर्शकों को पूरी तरह बाँधे रखता है।"[२२] अत: स्पष्ट है, कि कितर्नकार का पात्र एक ही समय अलग-अलग भूमिकाओं को अभिनीत करता चलता है। अत: कीर्तनकार की भूमिका अदा करनेवाले पात्र का अभिनय में निपुण होना अत्यंत आवश्यक है।

कीर्तनकार की भूमिका अभिनय की दृष्टि से एक चुनौती ही रही है।

कीर्तनकार की तरह ही अन्य पात्रों में भी अभिनय की दृष्टि से सर्वथा नयापन दिखाई देता है। कीर्तनकार के जो श्रोता है, वही बाद में आदिवासी कथा के मजदूर पात्र बन जाते हैं। युवा ही बाद में संघर्षशील कल्लु मजदूर की भूमिका निभाता है। (जयदेव हट्टंगडी द्वारा निर्देशित 'पोस्टर' का प्रयोग) जयदेवजी ने तो इस नाटक में कीर्तनकार के लिए दो कलाकारों का प्रयोग किया था - बापू कामेरकर और श्रीकांत दादरकर। उनकी दृष्टि से कीर्तनकार की मुख्य भूमिका कथाकार की ही रही है। वही दोनों बाद में अखंडानंद तथा गुरुजी की भी भूमिका निभाते हैं।"[२३]

इसीतरह मजदूर वर्ग के अभिनय में लेखक ने नृत्त तथा नाट्य का प्रयोग किया है। मजदूर माईम से काम करते हैं। उनके अभिनय में माईम का प्रयोग बडा प्रभावकारी बन गया है। इसमें समूह अभिनय की विशेषता दिखाई देती है। यहाँ सभी मजदूरों का अभिनय एक होना अत्यंत आवश्यक है। इसीतरह समूहनृत्य तथा समूहगान में भी सामुहिक अभिनय तथा माईम का कुशल प्रयोग दिखाई देता है।

रंगमंच की दृष्टि से भी 'पोस्टर' एक प्रभावी प्रयोग रहा है। रंगमंचीय सादगी तथा सरलता 'पोस्टर' की अनोखी विशेषता रही है। कथा के अनुसार विविध दृश्य रंगमंच पर प्रस्तुत होते हैं, किंतु उसके लिए किसी मंचीय साज-सज्जा की आवश्यकता नहीं पडती। बल्कि नाटककारने मंचीय साज-सज्जा को पूरी तरह से नकारा है। रंगमंच पर केवल कीर्तन के लिए आवश्यक वादय-तबला, हार्मोनियम, घुंगरू, मंजीरे आदि उपकरण रहते हैं।

नाटककार की सशक्त भाषा एवं समर्थ संवाद ही हर दृश्य को रंगमंच पर प्रस्तुत करते हैं। चाहे वह दृश्य फिर आदिवासी जंगल का हो, पटेल की आलिशान कोठी का हो या मंदिर के पिछवाडे का तथा वहाँ घटित बलात्कार की घटना का हो, सभी दृश्य सरलता से बिना किसी उपकरण, सशक्त भाषा द्वारा रंगमंच पर प्रस्तुत होते हैं। दृश्य-परिवर्तन के लिए प्रकाशयोजना की ब्लैक आउट पध्दति का किया गया प्रयोग भी बडा कुशल रहा है।

संगीत की दृष्टि से 'पोस्टर' में भारतीय संगीत को ही जानबूझकर रखा गया है। इस संगीत में शशांक शील द्वारा वादय के रूप में काँच के दो टुकडों का प्रयोग कर उसे अधिक प्रभावी बना दिया गया है।"[२४] स्थान-स्थान पर प्रयुक्त सार्थक गीतयोजना भी 'पोस्टर' के प्रयोग में नवप्राण निर्माण करती है। समस्त पात्रों की वेशभूषा आदि ये अंततक एक जैसी ही रही है। जयदेव हट्टंगडी के निर्देशन में "आविष्कार" नाट्यसंस्था ने 'पोस्टर' के १२५ से भी अधिक प्रयोग किए हैं। अन्य नाट्यसंस्थाओं द्वारा भी दिल्ली में यह नाटक सफलता से अभिनीत किया जा चुका है। इसप्रकार रंगमंचीय दृष्टि से भी 'पोस्टर' एक सफल एवं लोकप्रिय कृति रही है।

४.४.८ गीतयोजना :

दृश्य, अभिनय तथा मंचन की मौलिक विशेषताओं के साथ ही 'पोस्टर' की गीत-संगीत योजना विशेष प्रभावकारी रही है। दर्शकों के लिए यह विशेष आकर्षण रही है। संपूर्ण नाटक गीत-संगीत से भरा, संगीतमय नाटक का आस्वाद कराता है। इसमें नाटककार ने गीत-संगीत की सुरसरिता प्रवाहित कर दी है। इशस्तवन, सद्गुरुवंदना, गणेशवंदना, संस्कृत श्लोक, सुभाषित, भक्तिरस से परिपूर्ण पद, राग-

दारीयों में प्रस्तुत विविध गानशैलियाँ, लोकगीत, लोकनृत्य, पवाडा, भजन, कीर्तन, आरती आदि संमिश्र गीतयोजना नाटक में जान डाल देती है। समस्त दर्शक इन गीतों की सुरसरिता में तल्लीन हो जाते है। "पोस्टर" की गीतयोजना संगीत-सुधा का विलक्षण रसास्वाद प्रदान करती है। हाल ही में, डा.शेष के स्मृति समारोह के उपलक्ष्य में भारतीय विदयाभवन नाट्यगृह, मुंबई द्वारा 'पोस्टर' की गीतयोजना की प्रस्तुती विशेष प्रभावकारी सिद्ध हुयी। जयदेव हट्टंगडी के निर्देशन में तथा शांक नील के संगीत निर्देशन में प्रस्तुत ये गीत दर्शकों को संगीतमय वातावरण में तल्लीन कराते हैं।"[२५]

'पोस्टर' की गीतयोजना रसास्वादन के साथ ही कथासूत्र को जोडने में भी विशेष सहायभूत रही है। जिससे कथाप्रस्तुति में नवीनता एवं रोचकता आ गयी है। जैसे आरंभ में आदिवासी कथा का परिचय देनेवाला गीत -

"एक पुराना गाँव था
थके समय की छाती पर
एक बडा-सा गाँव था।"[२६]- कथा विकास तथा उसकी प्रभावी प्रस्तुति में सार्थक बन पडा है। इसीप्रकार आर्थिक माँग के स्तर पर पटेल की शोषणनीति के खिलाफ मजदूरों का चल रहा संघर्ष एवं उसका स्वरूप निम्नांकित गीत से अधिक प्रभावी हो गया है, जैसे -

चुप्पी की भाषा होती है,
..... होती है भाई होती है।
.....कांप रहा था मालिक अपने अंदर-अंदर।
हनुमान का रूप धर रहा था एक बंदर।
काल--सर्प-सा उभर रहा था वह पोस्टर।

काली आंधी फिर आयी थी आसमान पर।
छोटी-सी एक बूंद प्रलय को ढोती है।
.... मजदूरों की चुप्पी उनकी मजबूरी थी।
जडता भी गहराई, समय से दूरी थी।
एक हंसी अब भारी पडनेवाली थी।
इसीलिए चुप्पी की ढाल संभाली थी।
सन्नाटे की सांसों में,
कोई चिनगारी सोती है।
सोती है भाई सोती है।"[२७]

'पोस्टर' की गीतयोजना विविध रागदारीयों में तथा गानशैलीयों में चलती है। शास्त्रीय संगीत का विलक्षण आस्वाद प्रदान करती है। नाटक के आरंभ में प्रस्तुत सद्गुरु नमन, गणेशवंदना दर्शकों के मन में सात्त्विक भाव निर्माण करते हैं। धार्मिक, पवित्र वातावरण की सृष्टि करते हैं। बीच-बीच में प्रस्तुत होनेवाला भजन भी संगीत की एकरसता को बढाता है। दर्शकों को भक्ति-रस में डुबो देता है। पटेल की कोठी में अफसर के प्रवेश के बाद उसके स्वागतार्थ प्रस्तुत गज़ल, "साकी जाम पिला दे रे" अफसर की भोगवादी वृत्ति को प्रदर्शित करती है, साथ ही आदिवासी प्रांत की सरंजामशाही वृत्ति की विलासिता को भी दर्शाती है। नाटक के अंतिम भाग में प्रस्तुत "भोर भयी जन जागो" यह गीत भूप राग में प्रस्तुत होता है। रागदारी के साथ ही यह मजदूरों को जागरण का संदेश देता है। शोषकवर्ग से लड़ने के लिए उन्हें नयी प्रेरणा देता है। मोह, भय त्यागकर नयी उमंग से, साहस से, अन्याय-अत्याचार के खिलाफ लड़ने का बल माँगने की प्रेरणा देनेवाला गीत कथासूत्र में सजीवता का संचार करता है, तो आदिवासीयों का छत्तिसगढी गीत, "संगी चल मंडई जावो रे" एक साथ

गीत-नृत्य-संगीत का मनोहर संगम प्रस्तुत करता है। इस गीत के साथ दर्शक भी अपनी ताल बाँधते हैं। इस गीत में लोकसंस्कृति के दर्शन के साथ ही लोकरंजन की अद्भुत क्षामता भी दिखाई देती है।

इसप्रकार 'पोस्टर' की गीतयोजना, भारतीय लोक-संगीत का अपने आप में एक अनूठा एवं विलक्षण प्रयोग रही है। यह गीतयोजना, संगीत नाटक का विलक्षण आस्वाद कराती है। नाटक की एकसूत्रता, भावात्मकता को अधिक सरसता से प्रस्तुत करती है। गीत संगीत का यह अनोखा प्रयोग डा. शेष की प्रयोगधर्मी प्रतिभा का एक विलक्षण चमत्कार है। लेखक की नाट्यधर्मी प्रतिभा का अद्भुत कौशल है।

४.४.९ शीर्षक :

शीर्षक का सीधा अर्थ है - कृति का नामकरण। शीर्षक के लिए भी कुछ संकेत बताये गए हैं। कृति का शीर्षक निश्चित करते समय उनका विचार करना आवश्यक है। कृति का शीर्षक आकार-प्रकार में छोटा एवं पाठक की उत्सुकता बढानेवाला हो। वह आकर्षक तथा मार्मिक हो। शीर्षक हमेशा उद्देश्यप्रधान, घटनाप्रधान, अथवा मुख्य पात्र के नाम के आधारपर या विषयवस्तु के आधारपर दिए जाते हैं। कभी-कभी शीर्षक वातावरण प्रधान भी होते हैं। अत: शीर्षक देते नाटककार को इन बातों का विचार करना ही पडता है।

'पोस्टर' भी अपने आप में एक वैशिष्टयपूर्ण शीर्षक रहा है। यह आकार में लघु, घटनाप्रधान, कथ्य सूत्र से जुडा हुआ, मार्मिक शीर्षक है। कथ्य एवं घटना की दृष्टि से वह प्रतिकात्मक रहा है। 'पोस्टर' मजदूरों की संघशक्ति का, संघर्ष का, पटेल की शोषणनीती के विरोध का सशक्त प्रतीक बन जाता है। यही 'पोस्टर' मजदूरों को

उनके स्वायत्त अधिकारों के प्रति सजग बनाता है। पटेल के अन्याय-अत्याचार के खिलाफ लडने की प्रेरणा देता है। यह प्रतीक है, उस ताकत का, जो बडे-बडे शोषकवर्ग को भी डावांडोल करती है। उन्हें उनकी सत्ता से हटने के लिए बेचैन बनाती है। न्याय एवं सत्य की प्राप्ती के लिए मजदूरों में संघर्ष की चेतना जगाकर उन्हें एकसंघ बनाती है।

इसप्रकार यह शीर्षक छोटा, आकर्षक, जिज्ञासा भाव बढानेवाला, मार्मिक शीर्षक रहा है। वह कथा में नयी-नयी घटनाएं निर्माण कर उसे गतिशील बनाता है। संघर्ष को तेज कर उसे चरमसीमा की ओर ले जाने में अधिक उपयोगी सिद्ध होता है। इसप्रकार शीर्षक की दृष्टि से भी 'पोस्टर' सार्थक, औचित्यपूर्ण रहा है।

४.५ निष्कर्ष :

शिल्प, शैली एवं प्रस्तुति की दृष्टि से नितांत नवीनता बरतनेवाला 'पोस्टर' डा. शेष का एक अभिनव प्रयोग है। कथ्य की दृष्टि से वह सामाजिक है, किंतु प्रयोग की दृष्टि से वह एक मौलिक रचना है। १९७७ में लिखा यह नाटक अपने समय की मंचीय संभावनाओं को लेकर चलता है। कीर्तन शैली में प्रस्तुत यह नाटक, अपने समय के नाट्यधर्मी एवं लोकधर्मी दोनों ही नाटकीय प्रवाहों का एकसाथ निर्वाह करता है। अंचलविशेष की सभ्यता एवं जीवनपध्दति के साथ ही वहाँ के शोषणातंत्र का भयावह स्वरूप अंकित करता है। आदिवासीयों के शोषणातंत्र में जिम्मेदार सभी वर्ग-पुलिस, प्रशासक, जमींदार का असली नकाब उतारकर स्वतंत्रता प्राप्त भारत की आदिवासी प्रांत की यथार्थ स्थिति उजागर करता है।

कथा वस्तु के दोहरे आयाम एवं नाटक के भीतर नाटक का प्रयोग कर लेखकने अपने नाटकीय कौशल का परिचय दिया है। कीर्तन जैसी गंभीर शैली को अपनाकर भी नाटक की सरसता एवं कलात्मक ऊँचाई लक्षणीय बन पडी है। लोकसंगीत, लोकनृत्य, एवं विभिन्न रागदारियों में प्रस्तुत गीतयोजना नाटक में नवचैतन्य निर्माण कर उसकी एकरसता को वृद्धिंगत करती है। 'पोस्टर' के संवाद एवं सशक्त भाषा उसके शिल्प की सर्वोपरी विशेषता रही है। सरल-सुबोध संवाद एवं सशक्त भाषा हर दृश्य को सहजता से एवं सजीवता से मंच पर प्रस्तुत करते हैं। कथ्य को गतीशील बनाते हैं। रंगमंचीय सादगी, दृश्यविधान की सरलता एवं अभिनेयता की मौलिकता नाटक का अनूठा आकर्षण है। एक ही पात्र द्वारा विभिन्न भूमिकाओं की प्रस्तुति में एक नया प्रयोग दिखाई देता है , जो अपेक्षाकृत सराहनीय है। इसप्रकार शिल्प, शैली एवं प्रस्तुति की दृष्टि से 'पोस्टर' सर्वथा नवीन, मौलिक एंव सफल कृति रही है।

संदर्भ

१. निर्देशक श्री जयदेव हट्टंगडी से साक्षात्कार के आधार पर

२. 'पोस्टर' की सुवर्ण महोत्सवी स्मारीका के आधार पर

३. सं.डा. विनय - डा. शंकर शेष ग्रंथावली - पृ.क्र. ६०

४. डा. शंकर शेष - पोस्टर - पृ.क्र. ८४

५. डा. संपतराव जाधव - डा.शंकर शेष के साहित्यिक विषयों और शिल्पविधियों का अनुशीलन - पृ.क्र. ५७६

६. डा. शंकर शेष - पोस्टर - पृ.क्र. १११

७. डा. शंकर शेष - पोस्टर - भूमिका

८. डा. संपतराव जाधव - डा.शंकर शेष के साहित्यिक विषयों एवं शिल्पविधियों का अनुशीलन - ५७७

९. डा. दुर्गा दीक्षित - नाटक और नाट्यशैलियाँ - पृ.क्र. १३०

१०. डा. सुरेशचंद्र शुक्ल - आधुनिक हिंदी नाटक - पृ.क्र. १३०

११. डा. शंकर शेष - पोस्टर - पृ.क्र. ९७

१२. डा. शंकर शेष - पोस्टर - पृ.क्र. ८५,८६

१३. डा. शंकर शेष - पोस्टर - पृ.क्र. ८६

१४. डा. शंकर शेष - पोस्टर - पृ.क्र. १४२, १४३

१५. डा. शंकर शेष - पोस्टर - पृ.क्र. १०५

१६. डा. शंकर शेष - पोस्टर - पृ.क्र. १००, १०१

१७. डा. शंकर शेष - पोस्टर - पृ.क्र. ११२

- २ -

१८. डा. शंकर शेष - पोस्टर - पृ.क्र. ९९

१९. डा. शांति मलिक - हिंदी नाटकों की शिल्पविधी का विकास-पृ.क्र५२*

२०. डा. शांति मलिक - हिंदी नाटकों की शिल्पविधी का विकास -पृ.क्र५२५

२१. डा. मधुकर हसमनीस - प्रयोगशील नाटककार डा. शंकरशेष-पृ.क्र. ११५

२२. डा. शंकर शेष - पोस्टर - भूमिका

२३. निर्देशक श्री जयदेव हट्टंगडी से साक्षात्कार के आधार पर

२४. डा. शंकर शेष स्मृति समारोह, १९९६ के आधार पर

२५. डा. शंकर शेष स्मृति समारोह, १९९६ के आधार पर

२६. डा. शंकर शेष - पोस्टर - पृ.क्र. ९९

२७. डा. शंकर शेष - पोस्टर - पृ.क्र. १३३